जुलाई १९५३

मूल्य १।।।)

मुद्रक तथा प्रकाशक :
चूलचन्द वसूमल
राजपाल प्रेस, आगरा

"बापू"

म्रिय-माण जाति का त्राण किया,
जन-जनता का कल्याण किया,
नव राष्ट्र-देश-निर्माण किया,
युग-युग उर में बसिये बापू–
मानव-हित हेत जिये बापू।

कोटानिकोटि की शक्ति लिये,
अगणित हृदयों की भक्ति लिये,
असहायों की अनुरक्ति लिये,
हँस-हँस विष-घूँट पिये बापू–
मानव-हित हेत जिये बापू।

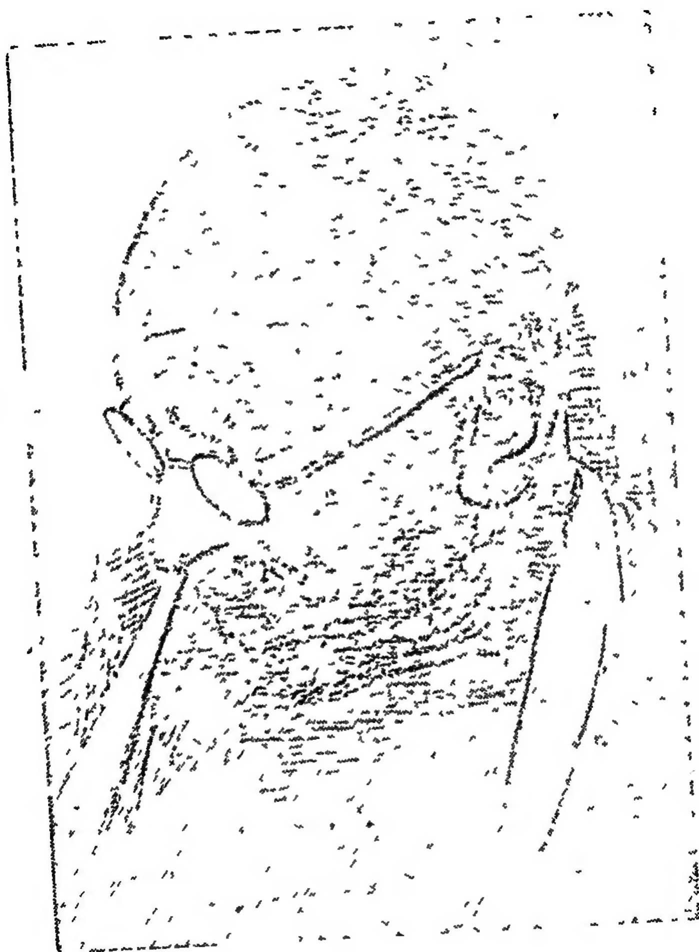
ध्रुव धैर्य धार तुम राम बने,
गीता गाकर घनश्याम बने,
शुचि, सत्य, अहिंसा-धाम बने,
अनुपम तप-त्याग किये बापू–
मानव-हित हेत जिये बापू।

स्वातन्त्र्य-सूर्य अब उदय हुआ,
भारत का पुनि अभ्युदय हुआ,
शुभ सत्य-धर्म्म का विजय हुआ,
पग-पग पर पुण्य लिये बापू–
मानव-हित हेत जिये बापू।

'बापू'

की

अमर आत्मा को



नम्र निवेदन

भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त कराने वाले महापुरुषों में विश्व-वन्द्य महात्मा गांधी अग्रगण्य हैं। सौभाग्य से आज हम स्वतन्त्र हैं, और देश में स्वराज्य-सूर्य्य की सुरम्य रश्मियाँ प्रस्फुटित हो रही हैं। भारतमाता की बन्धन-बेड़ियाँ काटने के सुदृढ संकल्प के साथ पूज्य बापू ने 'स्वराज्य' या 'रामराज्य' की भी कल्पना की थी। उनकी इस कल्पित कल्पना का संकेत इस पुस्तक में 'बापू का रामराज्य' शीर्षक के नीचे मिलेगा। बापू का 'रामराज्य' धर्म्म-प्रधान और सदाचार-सम्पन्न 'रामराज्य' है। वे धर्म्म को संकुचित, संकीर्ण या साम्प्रदायिक नहीं मानते। उनका धर्म्म—सत्य, अहिंसा, समता, स्नेह, और विश्व-बन्धुत्व की अमर तथा अमिट भावना पर आश्रित है। धर्म्म की प्राचीन परम्परा

और ऋषि-मुनि जनोचित व्याख्या भी यही है। दुर्भाग्यवश आज सार्वभौम, सार्वजनिक और सर्व-सम्मत धर्म्म को संकीर्ण सम्प्रदायवाद की 'उपाधि' दे दी गई है, और इसीसे वह त्याज्य-सा समझा जाने लगा है। यह दुःख की बात है।

मैंने इस 'रामराज्य' की रचना पूज्य बापू तथा प्राचीन-अर्वाचीन अन्य महाभागों की विचार-धाराएँ लेकर की है, और मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम के राज्य को ही विचार-बिन्दु बनाकर कुछ बातें लिख डाली हैं। भारतीय भावना और भारतीय संस्कृति में जो कुछ सुन्दर और सुरुचि-सम्पन्न प्रतीत हुआ है, उसी की झाँकी या झलक मैंने अपने 'रामराज्य' में दिखाई है। अर्थात् 'रामराज्य' की भावना के समर्थन या पोषण में जो कुछ अच्छा लगा है, उसीको इस पुस्तक में पद्य का रूप दे दिया गया है। पाठकों को इस 'रामराज्य' में 'कवित्व' या 'कला' के तो दर्शन न होंगे परन्तु उन्हें उसमें एक ऐसी भावना की धीमी ध्वनि अवश्य सुनाई पड़ेगी, जिसकी इस स्वार्थान्ध संसार को आज सबसे अधिक आवश्यकता है।

'रामराज्य' में मेरा कुछ नहीं, जो कुछ है, मनस्वी महानुभावों का है। मैंने तो केवल तुकबन्दी कर दी है। और उसीको मैं अपनी कह सकता हूँ।

शङ्कर-सदन, आगरा
गंगा-दशहरा, २०१०

हरिशङ्कर शर्मा

रामायण का 'रामराज्य'

बयरु न कर काहू सन कोई
राम-प्रताप विषमता खोई
दैहिक, दैविक, भौतिक तापा
राम-राज्य नहिं काहुहि व्यापा
सब नर करहिं परस्पर प्रीती
चलहिं स्वधर्म्म निरत स्रुति नीती
अल्प मृत्यु नहिं कवनिहु पीरा
सब सुन्दर सब विरुज सरीरा
नहिं दरिद्र कोऊ दुखी न दीना
नहिं कोइ अबुध न लच्छन हीना
सब गुनज्ञ पंडित सब ज्ञानी
सब कृतज्ञ नहिं कपट सयानी

—महाकवि तुलसीदास

अर्थात् 'रामराज्य' की कुछ मुख्य-मुख्य बातें ये हैं—अवैर अर्थात् आपसी लड़ाई-झगड़े का अभाव। विषमता का नाश और सब वर्गों में समानता। सब प्रकार के दुःखों—दैहिक, दैविक और भौतिक—का निवारण। प्रेम-भाव, मेल-जोल या भाईचारा। स्वधर्म या कर्त्तव्य-पालन। स्वस्थ तथा दीर्घायु होना। गुणवान और ज्ञानवान होना।

बापू का 'रामराज्य'

विश्व-वन्द्य महात्मा गांधी ने उस स्थिति को 'राम-राज्य' माना है, जब जनता और जन-सेवक (शासक या अधिकारी) दोनों धर्मानुरत, सदाचार-सम्पन्न हों। उनमें समता, शुचिता, स्नेह और बन्धुत्व की भावना हो। बापू ने समय-समय पर 'रामराज्य' की जो व्याख्याएँ की हैं, उन में से कुछ नीचे दी जाती हैं:—

प्रजा का शासन, -जिसका आधार है विशुद्ध नैतिक बल, 'रामराज्य' है। अर्थात् वह राज्य जिसमें धन, वर्ण, जाति और सम्प्रदाय सम्बन्धी असमानताएँ लुप्त हो जाती हैं। जिसमें धरती और शासन-व्यवस्था जनता की होती है और जहाँ न्याय शीघ्र, सस्ता और अपव्ययरहित होता है। और इसी लिये जहाँ धर्म, भाषण तथा लेखनी की स्वतन्त्रता होती है। इन समस्त सुविधाओं का मूलाधार होता है नैतिक संयम और नैतिक अनुशासन, जिसकी प्रेरणा का स्रोत होता है अन्तःकरण।

हमारी शासन-प्रणाली हमारे अनुकूल होनी चाहिए। वह ऐसी हो जिसका अन्तर, बाह्य की अपेक्षा महत्तर हो। मैंने इसे 'रामराज्य' की संज्ञा दी है। अर्थात् प्रजा का शासन जिसका आधार हो विशुद्ध नैतिक बल।

स्वराज्य का अर्थ है—स्वयम् अपने ऊपर प्राप्त किया हुआ राज्य। अतएव स्वराज्य का अर्थ है—देश के आयात और

निर्यात पर, सेना पर और अदालतों पर जनता का पूरा नियन्त्रण।

मेरे सपनों का स्वराज्य गरीबों का स्वराज्य है। धनिकों को जीवन की जो साधारण सुविधाएँ प्राप्त हैं, वे सबको मिलनी चाहिएँ। स्वराज्य में राजा से लेकर प्रजा तक एक भी अंग अविकसित रहे, ऐसा नहीं होना चाहिए। उसमें कोई किसी का शत्रु न हो। सब अपना-अपना काम करें। कोई निरक्षर न रहे। उत्तरोत्तर सबके ज्ञान की वृद्धि होती जाय। सारी प्रजा में कम-से-कम बीमारियाँ हों। कोई भी दरिद्री न हो। परिश्रम करने वाले को बराबर मिलता रहे। उसमें जुआ, चोरी, मद्यपान और व्यभिचार न हो। वर्ग-विग्रह न हो। धनिक अपने धन का विवेकपूर्वक उपयोग करें—भोग-विलास की वृद्धि करने अथवा अतिशय संचय करने में नहीं। यह नहीं होना चाहिए कि मुट्ठी-भर धनिक मीनाकारी के महलों में रहें और हजारों-लाखों लोग हवा और प्रकाश-रहित कोठरियों में।

× × × ×

मेरे नज़दीक धर्म्मविहीन राजनीति कोई चीज नहीं है। धर्म्म के मानी वहमों और गतानुगतिकत्व धर्म्म नहीं; द्वेष करने वाला और लड़ने वाला धर्म्म नहीं, बल्कि विश्वव्यापी सहिष्णुता का धर्म्म। नीतिशून्य राजनीति सर्वथा त्याज्य है।

मैं धर्म्म से भिन्न राजनीति की कल्पना नहीं कर सकता। वास्तव में धर्म तो हमारे हर एक कार्य में व्यापक होना

मिलना चाहिए। जो सच्चा पंचायती राज्य या लोक-राज्य होता है, उसे लोगों के पास से पैसा तो लेना पड़ता है, लेकिन उसका दाम दस गुना करके घरों में चला जाना चाहिए। आज करोड़ों रुपये हमारे हाथ में आगये तो करोड़ों ही हम खर्च कर डालें, ऐसा नहीं है। करोड़ों मे से एक-एक कौड़ी लेकर भी हम आहिस्ता-आहिस्ता और फूँक-फूँक कर चलें। एक कौड़ी भी हम खर्च तो करें, लेकिन वह देश की झोंपड़ियों में जाती है कि नहीं, मेरे लिये तो यही हिसाब काफी रहता है। जो करोड़ों रुपया हिन्दुस्तान की झोंपड़ियों में से खिंचकर आता है, उसमें से कितना हम उनको वापस भेज सकते हैं।

× × × ×

सच्चे प्रजातन्त्र में हमारे यहाँ किसानों का राज्य होना चाहिए। अच्छे किसान बनना, उपज बढ़ाना, जमीन को कैसे ताजा रखना यह सब जानना किसानों का काम होना चाहिए। रामराज्य में कोई मन्त्री महलों में नहीं रहेगा। किसी मन्त्री और सरकारी अधिकारियों को ऊँची तनुखाहें न दी जायँगी। बड़े-बड़े खर्चीले तथा बरबादी-भरे सरकारी महकमे नहीं रहेंगे।

× × × ×

लोकतन्त्र में जहाँ, कोई सिद्धान्त की बात नहीं है, और किसी कार्य-क्रम को चलाना है, वहाँ अल्पमत को बहुमत की बात माननी होगी। बहुमत का यह अर्थ नहीं कि वह एक व्यक्ति

की भी राय को, यदि वह ठीक है, दवा दे। एक व्यक्ति की राय को, यदि वह ठीक है, बहुतों की राय की अपेक्षा अधिक महत्त्व देना चाहिए। सच्चे जनतन्त्र के सम्बन्ध में यह मेरा मत है कि उसमें रास्ता चलने वाला जो बोले वह भी सुना जाय।

× × × ×

स्वराज्य मे प्रत्येक ग्राम चोरों और डाकुओं के भय से अपनी रक्षा करने मे समर्थ हो और प्रत्येक ग्राम अपने लिये आवश्यक अन्न-वस्त्र पैदा करे। धनवान और श्रमजीवियों में परस्पर मित्रता हो। मजदूर उचित मजदूरी लेकर धनवान के यहाँ खुशी से काम करें।

× × × ×

सभी स्वस्थ टैक्सों को टैक्स देने वाले के पास, आवश्यक सेवाओं के रूप में, दस गुना होकर लौटना चाहिए। श्रम के रूप मे टैक्स देना राष्ट्र को शक्ति देना है। जहाँ मनुष्य स्वेच्छा से समाज-सेवा के लिये श्रम करते हैं, वहाँ धन-विनिमय अनावश्यक हो जाता है।

× × × ×

स्वराज्य में सब प्रकार के अपराध रोग-रूप हैं। अतः उनका रोगों की तरह ही उपाय होना चाहिए। अपराध वर्त्तमान सामाजिक संगठन की परिस्थिति के परिणाम हैं। अपराधियों को दण्ड दिलाने या उनसे बदला लेने की भावना

न होनी चाहिए, बल्कि उन्हें सुधार कर सुनागरिक बनाने का प्रयत्न करने की जरूरत है।

× × × ×

स्वराज्य में अगर लोग आपस में ही अपने विवाद निपटा लें तो तीसरा आदमी अपनी सत्ता क़ायम नहीं रख सकेगा। यह कौन कह सकता है कि तीसरे आदमी का फैसला हमेशा ठीक ही होता है। सच्ची बात क्या है, यह दोनों पक्ष वाले ही जानते हैं। यह तो हमारा भोलापन और अज्ञान है जो हम यह मान लेते हैं कि हमारे पैसे लेकर वह तीसरा आदमी हमारा इन्साफ करता है।

× × × ×

राज्य हिंसा का संगठित और केन्द्रित रूप है। व्यक्ति की आत्मा होती है, परन्तु राज्य आत्मारहित मशीन है। उसे हिंसा से बचाया ही नहीं जा सकता, क्योंकि उसकी उत्पत्ति ही हिंसा से है।

सरकार पूरी तरह अहिंसक होने में कभी सफल नहीं हो सकती, क्योंकि वह (राज्य में रहने वाले) सब मनुष्यों की प्रतिनिधि है। आज मैं ऐसे स्वर्ण-काल की बात नहीं सोच सकता, लेकिन मैं ऐसे समाज के अस्तित्व की सम्भावना में विश्वास करता हूँ जो प्रमुख रीति से अहिंसक हो।

× × × ×

सच्चे जनतन्त्र को किसी भी प्रयोजन के लिये सेना पर

आश्रित नहीं रहना चाहिए। सैनिक सहायता पर रहने वाला राज्य नाममात्र का जनतन्त्र हो जायगा। सैनिक शक्ति मस्तिष्क के स्वतन्त्र विकास में बाधा डालती है। वह मनुष्य की आत्मा का विनाश करती है।

× × × ×

पुलिस के सदस्य अहिंसा में विश्वास रखने वाले हों। अर्थात् वे जनता के स्वामी नहीं, सेवक बनें। जनता और पुलिस के पारस्परिक सहयोग द्वारा ही सुगमता से शान्ति-व्यवस्था हो सकती है। पुलिस के पास हथियार होंगे, किन्तु उनका प्रयोग यदि कभी हुआ तो बहुत कम होगा। वास्तव में पुलिस के सिपाही सुधारक होंगे और उनका पुलिस सम्बन्धी कार्य लुटेरों और डाकुओं तक सीमित होगा।

× × × ×

जो लोग रिश्वत लेते हैं, वे अपने और अपने मुल्क के साथ गुनाह करते हैं। स्वराज्य में ऐसे गुनहगारों के लिये कहीं स्थान न होगा।

× × × ×

स्वराज्य होने पर गाँव में नाट्यगृह, शालागृह और सार्वजनिक सभागृह रहेगा। साफ़ पानी के लिये खास कुएं और तालाब रखे जायेंगे। शिक्षा सबके लिये अनिवार्य होगी। गाँव की सब प्रवृत्तियाँ सहकारी तौर पर चलाई जायेंगी।

किसी प्रकार का जाति-भेद या छुआछूत का भाव नहीं रहेगा। अपनी न्यायपूर्ण माँगें प्राप्त करने के लिये अहिंसा पर अधिष्ठित सत्याग्रह और असहकार के मार्ग का लोग अवलम्बन करेंगे। ग्राम में एक ग्राम-रक्षक दल भी होगा। गाँव का शासन पंच लोगों की ग्राम पंचायत चलाएगी। पंचायत का चुनाव ग्राम के बालिग स्त्री-पुरुष मतदाता करेंगे।

शिक्षा हमारी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति तथा मानव-विकास में सहायक होनी चाहिए। शिक्षा केवल मानसिक व्यायाम या दिमागी अय्याशी न हो। ज्ञान रचनात्मक प्रवृत्तियों द्वारा दिया जाय। जीवनोपयोगी विषयों की ही शिक्षा दी जाय और उसमें उन आवश्यक दस्तकारियों से सहायता ली जाय, जिन्हें सीख कर गाँव और नगर के आदमियों के जीवन में स्वावलम्बन का उदय हो। उनमें सहकारिता, सहयोग, लोक-सेवा और सदाचार की भावना हो। उनमें लोभ-लालच, स्वार्थ या असन्तोष न हो। वे अपने जीवन का ध्येय ऊँचा रखें।

× × × ×

लोगों को अपना स्वास्थ्य ठीक रखने और बीमार न पड़ने की तथा यदि कभी संयोगवश बीमार पड़ जायं तो साधारणतया स्वयम् ही इलाज कर लेने की शिक्षा दी जानी चाहिए। रोज़-रोज़ बीमार पड़ना अपमानजनक है। स्वास्थ्य के लिये शरीर की सफाई के अतिरिक्त घर-बार, गली-मुहल्लों,

सड़कों तथा बस्ती के आस-पास की सफ़ाई भी आवश्यक है। गाँवों में पशुओं के रहने की व्यवस्था पर भी पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है।

झाँकी

यह दानवतामय मानवता
सकलंक अधोगति है अवता
सब मानव शुद्ध बनें-विचरें
ध्रुव धर्म्म धरें, शुभ कर्म्म करें

जग में न कहीं लघुता-गुरुता
सब में समझो शुचिता-समता
निजता-परता न बसे मन में
ममता न रहे जड़-चेतन में

जनता-हित जीवन-लक्ष्य बने रहे
उपकार-सुधा-रस-स्रोत बहे
नित कर्म्म करें, फल-आश तजें
भयहीन रहें भगवान भजें

निबलों पर प्रेम प्रसार करे
बल-वित्त भरे भय-त्रास हरे,
तन-क्षीण, मलीन न दीन रहें
सुख के शुभ साधन धीर गहें

रण रोप न विश्व विनाश करे
सुख, शान्ति, सुनीति प्रकाश करे
बल वैभव, वित्त न नाश करे
गुण-गौरव का सुविकास करे

तन पुष्ट बने, मन शुद्ध रहे,
धन-आगम-स्रोत विशुद्ध रहें
कटुनीत, कुनीति न बाधक हो
ऋजुता-शुचिता सुख-साधक हो

मृदुता उमगे जन-जीवन में
कटुता न निवास करे मन मे
दृढ़ता दृढ़ हो, व्रत-बन्धन मे
मदमत्त न हो धरणी-धन मे

कवि, पण्डित, गायक, वीर-व्रती
गुणवान, सुधी, यति, सिद्ध, सती
नित आदर मान करो सबका
दुख-संकट-भार हरो भव का,

पशु-रक्षण का नित ध्यान रहे
कुल-गोकुल का हित-ज्ञान रहे
निज गौरव का अभिमान रहे
तन त्याग करो, पर आन रहे

भ्रम-भाव-भरी न अनीति अड़े
जिससे विकराल अकाल पड़े
पट-अन्न-विहीन दरिद्र मरें
सुख-भोग धनी, विचरें-विहरें

जग-जीवन से न उदास बनें
विचरें सब ठौर न दास बनें
सुख-भोग यही कि स्वतन्त्र रहें
परतन्त्र बने दुख-द्वन्द्व सहें

मत-पन्थ समाज-विघातक हैं
मृदु मानवता पर पातक हैं
सब मे नित प्रेम-प्रतीति रहे
प्रिय बन्धु बनें, सुख-स्रोत बहे

जग की सर्व वस्तु समेट धरें
अपने-अपने गृह-कोष भरें
यह पद्धति वैर-विधायक है
दुख-मूल; न शान्ति-प्रदायक है

नर-घातक विश्व-विधान न हो
धन-सम्पति-शक्ति-प्रधान न हो
पर-पीड़न-शोषण शान न हो
अविवेक-विवेक समान न हो

नर-नारि समाज-सुसाधक हों
शुचिता-समता-अनुराधक हों
अपने सब दूषण दूर करें
जग में महिमा भरपूर भरे

सब देव बनें, सद भक्त बनें
अनुरक्त रहे, न विरक्त बनें
वह काम करें भव स्वर्ग बनें
यह जीवन ही अपवर्ग बनें

विषय-सूची

—०००—

वन्दना

हे मंगलमय भगवान् जगत् के त्राता
हे चिरन्तनाथ, विश्वम्भर, विश्व-विधाता
तू जीवों का कल्याण-त्राण करता है
जन-मन में शुभ-सद्भाव सदा भरता है

तू सकल सृष्टि का सार आदि कारण है
ब्रह्माण्ड तुम्ही ने किया धन्य धारण है
कर्त्ता, धर्त्ता, संहर्ता एक तुही है
गौरव-गरिमा अणु-अणु में गूँज रही है

तू माता, पिता, मित्र, भ्राता, त्राता है
तू विद्या, बल, धन, धाम, धर्म्म, धाता है
तू देवों का भी देव दिव्य दाता है
कह 'नेति-नेति' ज्ञानी गुण-गण गाता है

तू शरण-दान दे भद्र भाव उमगाता
विज्ञान-भानु से मोह महान् मिटाता
तू करुणासागर, अविनाशी, अक्षर है
तू सर्व-श्रेष्ठ, सत, अविचल, अजर, अमर है

है सत्य नाम ईश्वर तेरा सुखदायी
सत की महिमा ने परम प्रतिष्ठा पायी
जब अटल अहिंसा भाव जन्म लेता है
तब सत्य-रूप प्रभु, तू दर्शन देता है

प्रभु, सचराचर का एक तुही त्राता है
तू विश्व-विधायक प्रेम-दया दाता है
जो शुद्ध भाव से तुझ को अपनाते हैं
वे निश्चय ही मनमाना सुख पाते हैं

तू मार्ग-प्रदर्शन की विधि बतलाता है
जन-जीवन में शुचिता-ऋजुता लाता है
वाणी मनीषियों की पवित्र करता है
कवियों की प्रतिभा में प्रकाश भरता है

तू कष्टों में परितोष दिया करता है
पीड़ित हृदयों की पीर तुही हरता है
तू करुणाकन्द, विधाता, परिपालक है
तू न्याय-निधान, सृष्टि का संचालक है

तू सत्य-स्रोत-संरक्षक बल-दाता है
प्रभु, असत् भाव तुझको न कभी भाता है
तू सदा सत्य की जय करता रहता है
अघ अनृतअधम की क्षय करता रहता है

तू वर वैभव-सम्पन्न ज्ञान-गरिमा है
अणु-अणु, कण-कण गाते तेरी महिमा है
बल-विक्रम तेज-ओज तुझ से पाते हैं
तेरी छाया से अमृत बन जाते हैं

प्रभु, तुही गर्भ में भोजन पहुँचाता हैं
निज करुणा से जन्माता-पनपाता है
हम धराधाम पर प्रभु, जिस क्षण आते हैं
उस से पहले ही क्षीर-सिन्धु पाते हैं

सब तुझे जानकर सत्य मार्ग गहते हैं
अभिशाप-पाप से दूर सदा रहते हैं
जो जपता तुझको किन्तु पापकारी है
वह दम्भी-दुष्ट, सत्य-शुचिता-हारी है

कष्टों से कम्पित जब जो जन आता है
तेरे चरणों में शरण सदा पाता है
तू करुणाकर तब अभय दान देता है
शरणागत के सब संकट हर लेता है

सर्वत्र व्याप्त अद्भुत-अपार माया है
सचराचर में छाई तेरी छाया है
गुण-अवगुण तुझ से नाथ, न छिप पाते हैं
सब के शुभ कर्म्म-कुकर्म्म दृष्टि आते हैं

फिर कहाँ छिपें और कैसे पाप छिपाएँ
तू सर्वव्यापक सब में तुझको पाएँ
तू ज्ञान-दान दे हृदय विशुद्ध बनादे
घट-घट में अपनी उज्ज्वल ज्योति जगादे

जैसे विचार वैसी जीवन की छाया
जैसी छाया वैसी कर्म्मों की माया
शुभ-सद्विचार संचार नाथ, तू करदे
हिय में विशुद्धताः मन में शुचिता भरदे

जिन-जिन से हम भयभीत सदा रहते हैं
जिनके कारण संकट सदैव सहते हैं
वे व्यक्ति, वस्तु या भाव नष्ट हो जाएँ
हम पतित-पावनी ज्ञान-गंग में न्हाएँ

तरु गरिमा-गायन को न शब्द पाते हैं
हो प्रेम-विभोर विनय से झुक जाते हैं
ये पुष्प-लताएं हँस-हँस फूल रही हैं
भगवान्-भक्ति में भोई भूल रही हैं

खग गण प्रमुदित हो चाव चहचहाते हैं
तेरी महिमा पर हँसते-हर्षाते हैं
कीरी-कुंजर सबही की सुधि लेता है
तू विश्वम्भर, सब को भोजन देता है

सागर, तड़ाग, वन-उपवन गुण गाते हैं
नद-नाले-निर्झर गा-गा थक जाते हैं
पर्वत-मालाएँ मूक ध्यान धरती हैं
नदियाँ नित कल रव कर प्रणाम करती हैं

मानव तो सचमुच अनुपम आराधक है
तेरी विभुता का सर्वोपरि साधक है
इस ने तू भक्ति-भाव से अपनाया है
निज ज्ञान-शक्ति से प्रभु, तुझको पाया है

तू तेजस्वी है; तेजदान कर हमको
तू वीर्यवान है; बल प्रदान कर हम को
तू है समर्थ भगवान, भक्ति दे हमको
तू सहनशील है, सहन-शक्ति दे हमको

विश्व-बन्धुत्व

है एक विश्व-परिवार ईश पालक है
वह परम पिता, माता, प्रभु, संचालक है
सब एक भाँति पैदा होते, मरते हैं
निज-निज गति-मति-अनुसार कर्म्म करते हैं

सब एक भाँति सोते-जगते खाते हैं
सब एक भाँति गौरव-गाथा गाते हैं
सब एक भाँति सुख-दुख भोगा करते हैं
सब एक भाँति हँसते, रोते, डरते हैं

जब अणु-अणु में रम रहा विश्व का त्राता
तब कैसा वैर-विरोध सभी प्रिय भ्राता
भक्तों ने तोड़ा भौतिकता से नाता
बन गया सभी का जीवन-केन्द्र विधाता

था सुदृढ़ विश्व-बन्धुत्व न कुछ द्विविधा थी
जन-जीवन में समता थी; सुख-सुविधा थी
सब स्नेह सहित रहते, नैतिकता बल था
आचार विशुद्ध, विचार विमल, निश्छल था

कोई न किसी की धन-सम्पति हरता था
सपने में भी कुविचार नहीं करता था
मन, वाणी, कर्म्म-क्रिया में तब समता थी
थे सब समाज-अनुरक्त न निज ममता थी

राजा या शासक का तब नाम नहीं था
न्यायालय, संविधान का काम नहीं था
चोरी-जारी, दुष्कर्म्म पाप क्यों करते
भगवान्-भक्ति-कानन में सदा विचरते

फिर भेद-भाव विष-बेल कहाँ से आयी
मानवता पर दानवता क्यों कर छायी
उस भ्रातृभाव का टूटा कैसे ताँता
क्यों जुड़ा द्वेष-दानव से सब का नाता

निजता-परता से वैर बढ़ा दुखदायी
संकीर्ण भावना मन में सदा समायी
तब स्वार्थयुक्त व्यापार हुए मनमाने
जिससे प्यारे पुर-परिजन हुए विराने

जो उठा उसी ने निज समुदाय बनाया
अपना प्रभुत्व; अपना आतङ्क दिखाया
कर छिन्न-भिन्न सुन्दर समाज की काया
निज स्वार्थ-सिद्धि का कुत्सित जाल बिछाया

बन गये विविध समुदाय स्वार्थ के प्रेरे
समुदायों से समुदाय बने बहुतेरे
आपाधापी का भूत भयङ्कर जागा
मिट गया 'विश्व-बन्धुत्व' प्रेम-पथ त्यागा

इस भेद-भाव ने वह विष-पान कराया
मानवता की होगई नष्ट सब काया
जितने समूह उतने ही स्वार्थ पसारे
बन गये हाय, हम ही समाज-हत्यारे

अनुदार भाव ने वैर-भाव विस्तारा
संकीर्ण सम्प्रदायों का मिला सहारा
अपनी-अपनी धुन में रत सब नर-नारी
हा, भूलगये बातें मानव-हितकारी

'तू-तू'-'मैं-मैं' चल पड़ी, एकता सोई
उस विश्व-प्रेम की वर विभूति सब खोई
"मैं ऊँचा हूँ, वह नीचा-तुच्छ अधम है
मुझ को समझो निर्भ्रान्त; उसे भय-भ्रम है"

मानव से मानव शत्रु-भाव दरसाता
मानव के प्रति मानव न स्नेह सरसाता
मानवता के नाते न कर्म्म करते हैं
अपनी ही जाति-पांति पर सब मरते हैं

यदि सार्वजनिक हित की चर्चा चलती है
तो स्वार्थ-सिद्धि की उग्र अग्नि जलती है
संकीर्ण-संकुचित भाव जाग जाते हैं
अपने अयोग्य भी योग्य दृष्टि आते हैं

सुख का निर्माण स्वयम् मानव करता है
दुख का निर्माण स्वयम् मानव करता है
सुख-दुख दोनों का निर्माता मानव है
दुख पैदा कर बनता फिर क्यों दानव है

निज हाथों अपना सर्वनाश करने को
कट-मर कर केवल उदर-दरी भरने को
पशु-पक्षी तक संगठित नहीं होते हैं
केवल मानव ही निज विवेक खोते हैं

पशु-दल अपना संहार नहीं करता है
खगदल स्वजाति के प्राण नहीं हरता है
सर्पों ने कब सर्पों पर धावा बोला
चीटों ने चीटों पर छोड़ा कब गोला

संकीर्ण भाव से प्रेम-पन्थ भी छूटा
मानवता से मानव का नाता टूटा
छल-छद्म सहायक हुए स्वार्थ-साधन को
सब कुछ समझा मानव ने केवल धन को

जब घोर स्वार्थ के भाव बढ़े जीवन में
दुर्भाव जगा मानव के कुत्सित मन में
थाती को रिक्थ-रूप में आ अपनाया
तब ज्ञान-भानु पर अन्ध अँधेरा छाया

मानव के मन में रक्त-पिपासा जागी
सन्तोष प्रेम-मय पुण्य भावना भागी
बन गये स्वार्थ के सिन्धु सभी नर-नारी
हो गये अधोगति के अधन्य अधिकारी

पहले तो 'पंच' और 'मध्यस्थ' बनाये
दोनों ने जनता के विवाद निबटाये
क्रमशः राजा की सृष्टि हुई मनभाई
जिसने शासन की बागडोर अपनाई

बन-बन कर भूपति भूमि-भाग हथयाये
सत्ताधारी मानव नरेश कहलाये
इस भाँति स्वार्थ-सीमाएं विविध बनाईं
जो राजनीति ने वैध-विहित ठहराईं

निर्वाचित शासक धर्म्मवीर होता था
गुण-ग्राहक, न्यायी, कर्म्मवीर होता था
विद्वान्, विवेकी, राजनीति का ज्ञाता
सच्चे अर्थों में था वह राष्ट्र-विधाता

'सम्राट' 'स्वराट' 'विराट' 'महाराजा' थे
'अधिराज' 'महाअधिराज' राज-राजा थे
वर 'विश्वराट' 'एक राट' 'चक्रवर्ती' थे
सब 'सार्व भौम' नैतिकता अनुवर्ती थे

कुछ काल धर्म्म-युग रहा शान्त शासन का
निर्मल चरित्र, उज्ज्वल विवेक, शुचि मनका
फिर राजाओं पर स्वार्थ-साधना छाई
की एक दूसरे पर निर्द्वन्द्व चढ़ाई

निर्वाचन-पद्धति स्वार्थ-सिन्धु में डूबी
प्रतिनिधि-शासन-विधि से सब सत्ता ऊबी
बन गये नरेश वंश-क्रम के अनुयायी
पुत्रों ने पित्तरों की विभूति अपनायी

फिर राजनीति ने हत्याकाण्ड कराये
जाने इस कुटिला ने कितने जन खाये
नैतिकता के कैसे-कैसे गढ़ ढाये
आचारहीनता के दुर्दृश्य दिखाये

अधमा अनीति के दाव-पेच अद्भुत हैं
वंचकता से भरपूर छद्म-छल युत हैं
जैसा अवसर हो वैसा भाव दिखाना
निज स्वार्थ सिद्ध करके कृतार्थ हो जाना

कटु कूटनीति कुलटा की कपट कहानी
मनमोहक मानव-मृत्यु जगत् ने जानी
मानवता के मन्दिर को इसने तोड़ा
सत् प्रेम-प्रीति के मठ को इसने फोड़ा

मन, वचन, कर्म तीनों में विकट विषमता
है कूटनीति की रीति स्वार्थमय ममता
तृष्णा-लिप्सा ज्यों-ज्यों बढ़ती जाती है
यह युद्धनीति त्यों-त्यों प्रचार पाती है

सब देशों के निज स्वार्थ अलग होते हैं
उनके निमित्त रणवीर प्राण खोते हैं
जिस में अपार बल-विक्रम आजाता है
वह बली देश ही अगुआ कहलाता है

पद-मद में चकनाचूर हुए उच्छृङ्खल
बन गये विविध दल, बढ़े निरन्तर छल-बल
अत्याचारों में शक्ति समस्त लगाई
अन्याय मार्ग से की भरपूर कमाई

संघर्ष परस्पर हुए घोर दुखदायी
रण-रूप स्वार्थ ने विजय स्वार्थ पर पायी
अत्याचारों की हुई प्रज्वलित ज्वाला
मदमत्त हुए कर पान हलाहल-हाला

अबलों पर धक-धक धाक जमाने वाले
सबलों के आगे 'हाहा' खाने वाले
मानव अपने को शूर-वीर कहते हैं
युद्धों की सरिता में सदैव बहते हैं

दुर्घटित हुए उत्पात-उपद्रव भारी
था कहीं न धोरी-धनी, न्याय-अधिकारी
झगड़े-झंझट दिन-दिन बढ़ते जाते थे
अति उग्र भाव ऊँचे चढ़ते जाते थे

युद्धों के मिस वह उठी रक्त की धारा
रक्षक शासक बन गया हाय, हत्यारा
चल पड़ी स्वार्थ की आँधी उमड़-घुमड़ कर
आपाधापी का भूत चढ़ा अड़-अड़ कर

साम्राज्यवाद ने भीषण दृश्य दिखाया
अगणित मानव-समूह परलोक पठाया
दे-दे कर सत्य-न्याय, आदर्श-दुहाई
लड़ रहा हाय! भाई से प्यारा भाई

मानव ने ऐसे मारक यन्त्र बनाये
क्षण में असंख्य मानव परलोक पठाये
जो अगणित हत्या करे वही बलशाली
है युद्ध-नीति की कैसी रीति निराली

तोपें गर्जन कर गोले बरसाती हैं
अणु-शक्ति विश्व पर विपद्-वज्र ढाती हैं
अगणित मानव-समूह यों मर जाते हैं
संकीर्ण स्वार्थ-हित ही कुछ कर जाते हैं

निश-वासर अपनी सैनिक शक्ति बढ़ाना
अवसर आते ही औरों पर चढ़ जाना
मृदु मानवता पर भीषण वज्र गिराना
फिर जीत-हार की गौरव-गाथा गाना

है स्वार्थ वहाँ सिद्धान्त कहाँ से आया
इस स्वार्थ-नीति को सत्य भला कब भाया
अति क्लान्त, अशान्त विश्व व्याकुल रहता है
युद्धों के कारण घोर दुःख सहता है

जब महा युद्ध का विकट काल आता है
तब जन-समूह को क्रूर काल खाता है
नागरिक अन्न-पट तक का दुख पाते हैं
जीवन-सुविधा के लिये तरस जाते हैं

लड़ते-लड़ते जब योधा थक जाते हैं
तब कुछ दिन-तक विश्राम विवश पाते हैं
पर मन में युद्ध-ज्वाल जलती रहती है
जो रक्त-पात में परिणत हो बहती है

अनुदार, दम्भ, छल-छद्म-भाव की लीला
कर चुकी ढचर मानवता का अति ढीला
ये दुर्गुण-दल मानवता के मारक हैं
सद्भाव, एकता, समता संहारक हैं

तब विश्व-भावना मिटी मोह-तम छाया
निजता-परता का क्षुद्र भाव अपनाया
आपाधापी उठ खड़ी, एकता सोई
सत्युग की संचित वर विभूति सब खोई

जब-जब जनता में धर्म-भाव घटता है
अघमय अधर्म धरणी पर आ डटता है
तब-तब होते आदर्श पुरुष नय-नायक
सच्चे सेवक शुभचिन्तक भाग्य-विधायक

सज्जन-समाज की पीर-भीर हरने को
दानव-दुष्टों को नष्ट-भ्रष्ट करने को
जगती-तल पर ध्रुव धर्म-ध्येय धरने को
जन-जीवन में शुभ शान्ति-भाव भरने को

संकीर्ण भावना उनको नहीं सुहाती
यह वसुधा ही उनका कुटुम्ब बन जाती
वे सदा लोक-कल्याण किया करते हैं
मानवता के हित-हेतु जिया करते हैं

कल्याण-ज्योति

मनु मानवता के आदि पिता, पालक थे
वे धर्म्म-नीति नय के सत् संचालक थे
कर्त्तव्य-शास्त्र की ज्योति जगाने वाले
संस्कृति के भव्य भाव उमगाने वाले

मनु, व्यास, वशिष्ठ, कणाद, पतंजलि, नारद
जैमिनि, गौतम, शुकदेव, सुविज्ञ विशारद
कौशिक, दधीचि, मुद्‌गल, उतङ्क महामति
मुनि याज्ञवल्क्य, मुनि भरद्वाज योगी-यति

नचिकेता, सत्यकाम, जावालि धर्म्म-धृति
थे श्वेतकेतु, उपकोसल गूढ ज्ञान-गति
ध्रुव, चन्द्रहास, प्रह्लाद, सुधन्वा आए
सब भक्तों ने मानवता-पाठ पढ़ाए

ऋषि-वर वशिष्ठ ने धर्म्म-मर्म्म समझाया
रघुकुल का जगतीतल पर विभव बढ़ाया
वे रामचन्द्र के कुल-गुरु आदेशक थे
विधि, मर्यादा-संस्थापक-संरक्षक थे

ऋषि से रक्षित रघुवंश विशद कहलाया
भगवान राम का सुयश विश्व में छाया
सद्धर्म-सूर्य ने सद्गुण-कमल खिलाये
साकेत-सरोवर में सुदृश्य दिखलाये

सीता माता के जनक ज्ञान-बल धारी
थे ब्रह्मनिष्ठ तल्लीन, मुक्ति-अधिकारी
वे अनासक्त हो राज-काज करते थे
भौतिकता के भ्रम-भाव न मन धरते थे

वे राग-द्वेष से हीन अहंता त्यागी
कहने को थे मिथिलेश किन्तु वैरागी
निर्लिप्त भाव से शुभ शासन साधक थे
सच्चे सेवक जनता के आराधक थे

सब राज-सम्पदा थाथी सम अपनाई
बन कर विरक्त नृप ने निज आयु बिताई
जब देह-गेह का भी न मोह था मन में
तब क्या विदेह के लिये धरा या धन में

प्रिय भरत बन्धु ने राज-ताज ठुकराया
लक्ष्मण ने वन में प्रभु का साथ निभाया
कर घोर त्याग ऊर्मिला लखन की जाया
हो गयी धन्य; पातिव्रत पुण्य कमाया

साकेत त्याग जब राम सिधारे थे वन
तब किया भरत ने सेवक बन कर शासन
खा कन्द-मूल-फल कुश-आसन अपनाया
वल्कल धारे, तापस का वेश बनाया

प्रभु-भक्त भरत का शासन था सुखकारी
थे कुशल, दक्ष, निष्पक्ष, सभ्य अधिकारी
सेवा से सबका हृदय जीत लेते थे
सुविधा, सुख, धैर्य, न्याय निशि-दिन देते थे

वह प्रजाप्रेम, निष्काम कर्म शुभ साधन
वह मातृभूमि-अनुराग, स्वस्थ-शुचि जीवन
वह प्रेम-प्रीति नैतिकतामय अनुशासन
वह सक्षमता : वह निर्भय भाव-प्रकाशन

आचारवान, विद्वान्, कुशल, अधिकारी
सब जनता के श्रद्धेय, मित्र, हितकारी
दे-दे उपदेश सुभद्र भाव भरते थे
मन, वचन, कर्म से सब का शुभ करते थे

वे रामचन्द्र के प्रतिनिधि कहलाते थे
सर्वदा त्याग-तप में ही सुख पाते थे
आदर्श बन्धु; आदर्श भक्त, अनुचर थे
थे गृही किन्तु वस्तुतः भरत यतिवर थे

धर्म्मज्ञ भरत-लक्ष्मण की त्याग-कहानी
आदर्श, उच्च, उत्कृष्ट जगत् ने जानी
कर्त्तव्य कर्म्म-पालन की लगन लगी थी
सद् भ्रातृ-भक्ति की उज्ज्वल ज्योति जगी थी

भगवान व्यास ने संस्कृति-सुधा पिलाई
साहित्य-सृजन कर वर विभूति बरसाई
मानवता की मृदु मूर्ति, ज्ञान-गौरव थे
वे धन्य धर्म्म के धाम, सत्य-सौरभ थे

श्री कृष्णचन्द्र मानवता-उन्नायक थे
वे कर्म्मवीर नय-न्याय-नीति-नायक थे
मानव को ज्ञान दिया अज्ञान मिटाया
सारथि बन रण में आत्मतत्व समझाया

भगवान कृष्ण ने अत्याचार मिटाया
कर कंस ध्वंस अनुपम आदर्श दिखाया
श्री उग्रसेन को पुनः प्रजेश बनाया
सद् रीति-नीति का भव्य भाव उमगाया

माया-ममता में फँस अर्जुन घबराया
कर्तव्यहीन हो कुछ न समझ में आया
कम्पित थी देह भीरु बन भरमाया था
भौतिकता-जन्य मोह मन पर छाया था

तब योगिराज ने गीता तत्व सुनाया
है अमर आत्मा : नश्वर है सब काया
भौतिकता का ही नाश हुआ करता है
अज, अमर आत्मा मरा न वह मरता है

गीता में वह मानव-आदर्श दिखाया
जिसका प्रभाव वसुधा-भर पर है छाया
यह ग्रन्थ मुक्ति का मार्ग सुझा देता है
माया-ममता की आग बुझा देता है

श्री भीष्म पितामह धीर-वीर ब्रह्मचारी
दृढ़व्रती, धर्म्म-धी, अटल, सत्यव्रतधारी
पितु-भक्ति-भाव का सद् आदर्श दिखाया
शर-शय्या पर पड़ धर्म्म-मर्म्म समझाया

नृप रन्तिदेव ने वह आतिथ्य निभाया
जिस की न विश्व अब तक उपमा दे पाया
सर्वस्व अतिथि-सेवा में सदा लगाया
पर, धर्म्म-मार्ग से कभी न पैर डिगाया

आतिथ्य नित्य जब अगणित जन पालेते
तब कहीं कौर नृप अपने मुख में देते
संस्कृति का सार अतिथि-सेवा माना था
यह तत्व महत्त्वपूर्ण सबने जाना था

शिवि ने शरणागत पारावत अपनाया
निज मांस श्येन को देकर उसे बचाया
जो व्याकुल या भयभीत शरण आते थे
वे स्नेह सहित नित अभयदान पाते थे

निश्चय वह क्रूर काल था अति दुखदायी
जब हिंसा ने भी परम प्रतिष्ठा पायी
ले वेद-धर्म्म का नाम पाप करते थे
अगणित पशुओं के नित्य प्राण हरते थे

कर जीवों के बलिदान यज्ञ होते थे
हिंसा में रत रह कर विवेक खोते थे
हो धर्म्म-भ्रष्ट मद्-पान किया जाता था
निज अघता पर अभिमान किया जाता था

चहुँ ओर पाप की प्रभुता बोल रही थी
उन्मत्त-मत्त हो शठता डोल रही थी
महिलाओं का सम्मान नहीं होता था
हँसता अधर्म्म, सद्धर्म पड़ा रोता था

शूद्रों पर अत्याचार किये जाते थे
जीते जी उनके रक्त पिये जाते थे
धर्मध्वज दे-दे कर सद्धर्म दुहाई
करते थे निश-दिन पापाचार कमाई

जग उठी ज्योति तब सहसा विश्व-गगन में
बरसी विभूति वैशाली के आँगन में
सिद्धार्थ और त्रिशला के बजे बधाये
प्रभु वर्द्धमान जब धरा-धाम पर आये

वे राजकुमार दीन-दुखियों के त्राता
थे त्याग-तपस्या-सिन्धु वरिष्ठ, विधाता
वे करुणा-कोष, कृपालु, विविक्त विरागी
मानवता की मृदु मूर्ति तपस्वी-त्यागी

था राज-पाट का मोह न उनके मन में
बस बसा विमल वैराग्य पुण्य जीवन में
तज दिया सकल परिवार, प्रिया-पुर छोड़े
इस क्षणिक जगत् के सारे बंधन तोड़े

निज राजकोष से अगणित द्रव्य लुटाया
पीड़ित जनता का दारुण दुःख मिटाया
गृह छोड़ बने वे सब प्रकार संन्यासी
संयमी, तपस्वी, साधु, सुधी वनवासी

तप-तप कर जीवन विमल विशुद्ध बनाया
एकान्त वास करके युग एक बिताया
जब ज्ञान-भानु की ज्योति हृदय में जागी
कैवल्य-धाम के बने वीर अनुरागी

तप साढ़े बारह वर्ष तेज फैलाया
श्री वर्द्धमान से महावीर पद पाया
मरती मानवता को पीयूष पिलाया
नैतिकता का पुनि दिव्य दृश्य दिखलाया

पाखण्ड, दम्भ, दुर्मति, दुर्गम गढ़ ढाया
कर छुआछूत को नष्ट साम्य सरसाया
जन-जन पर प्रेम पसार श्वपच अपनाए
निज शिष्य, भक्त, भिक्षुक-भिक्षुणी बनाए

समता-ऋजुता के भाव भरे जीवन में
शुचि दया-अहिंसा फैल गयी जन-जन में
विकसा विवेक, मिटगया मोह-तम भारी
सब बने अहिंसा के अनन्य अधिकारी

फिर सम्प्रदाय-दानव का उदर विदारा
गुण-गरिमा का वैभव विलुप्त विस्तारा
नर, पशुओं की निर्दय बलि बन्द कराई
कर दूर वैर-विष, प्रेम-सुधा बरसाई

मानव मानव का भेदक भाव मिटाया
समता-सुनीति का सुखमय मार्ग सुझाया
इन्द्रिय-निग्रह, संयम की शक्ति दिखाई
निःस्वार्थ सर्व सेवा की रीति सिखाई

जन-जन को उपदेशामृत-पान कराया
भूले-भटकों को शुभ सन्मार्ग सुझाया
मानव-मंगल की महती महिमा गाई
कल्याण-मार्ग की सबको सुविधि बताई

वे विश्व-बन्धुता के प्रिय पुण्य प्रचारक
वे प्राणिमात्र के प्रेमी पर-उपकारक
वे द्वेष-दम्भ माया-ममता के नाशक
सद्धर्म-धाम अभिराम सुज्योति प्रकाशक

थे द्वन्द्वातीत सदा सुख-दुख सम भाये
भौतिकता पर वे आत्म-विजय कर पाये
मानवता का मौलिक आदर्श दिखाया
पापी-पतितों को स्नेह सहित अपनाया

अस्पृश्य-भाव का भवन विदारा तुमने
इस स्वार्थ-सिंह को तक कर मारा तुमने
तुम धन्य हुए, मानवता धन्य कहाई
है विश्व धन्य तुमसी विभूति अपनाई

हिंसा की भीषणता बढ़ती जाती थी
मानवता दानवता से भय खाती थी
आसुरी कृत्य शुभ कर्म कहे जाते थे
सद्गुण न कहीं कुछ भी विकास पाते थे

कुविचार क्रूर कर्म्मों के उत्पादक थे
अघ-ओघ दैत्य-दल के सब आराधक थे
संस्कृति का नाश, धर्म्म का ह्रास हुआ था
यह पुण्य देश तब पाप-निवास हुआ था

तज राज-पाट वैराग्य-भाव विस्तारा
नैतिकता का अद्भुत आदर्श प्रसारा
कर घोर तपस्या 'बुद्ध' भाव अपनाया
फिर अमर अहिंसा तत्व-सत्व समझाया

भगवान बुद्ध थे सत्य-भाव संचालक
समता, संयम, तप-त्याग धर्म्म-परिपालक
वे दया, क्षमा-अवतार तितिक्षा-साधक
थे अटल अहिंसा-सिन्धु स्नेह-आराधक

जग था अशान्त तब शान्ति-सुधा बरसाई
उत्ताप-ताप की अग्नि प्रचण्ड बुझाई
सन्मार्ग-साधना में नर-नारि निरत थे
राजा-रानी तक बुद्ध मार्ग अनुगत थे

उनकी सदशिक्षा पाप-पुंज हरती है
अज्ञान मेंट उज्ज्वल विवेक करती है
निष्काम भाव का द्वार दिखा देती है
मानवता का सन्मार्ग सुझा देती है

फैला प्रभाव मिटगयी मोह की माया
सर्वत्र, सत्य-शुचिता का वैभव छाया
हिंसा की हिंसा हुई अहिंसा भाई
क्रूरत्व भाव पर करुणा ने जय पाई

जब हृदय-धाम से अहम् भाव जाता है
तब राग-द्वेष भी शेष न रह पाता है
निजता-परता का भाव नष्ट कर देना
है सुख-रस से जन-जीवन-घट भर देना

ध्रुव ध्यान सत्य, विश्वास हृदय में लाना
अति नम्र वचन परमोच्च लक्ष्य-पद पाना
शुभ सदाचरण, सम-भाव, सुगुण अपनाना
है बुद्ध धर्म पर अविचल टेक टिकाना

सोती मानवता जाग उठी घर-घर में
नैतिकता का आदर्श अमर जग-भर में
भगवान बुद्ध ने गिरता देश बचाया
सर्वत्र अहिंसा का सन्देश सुनाया

जिस सत्य-अहिंसा से स्वराज्य पाया है
जिसको बापू ने मर-मर अपनाया है
उसका प्रभाव, बल, अजर-अमर, अक्षय हो
प्रभु महावीर, भगवान बुद्ध की जय हो

गुरु-मुख से पुण्य-प्रसाद-रूप जो पाया
वह शिष्यों ने घर-घर जाकर फैलाया
राजा-रंकों ने सद शिक्षा अपनाई
बन गये भिक्षुणी-भिक्षु बुद्ध-अनुयायी

सम्राट अशोक अहिंसा-तत्व प्रचारक
थे प्राणिमात्र के मित्र मानवोद्धारक
वे देव-प्रिय, कल्याण-मार्ग दर्शक थे
दीनों-दुखियों के सखा, सुधावर्षक थे

जन-जीवों के हित हेतु प्रयत्न प्रसारा
भारत से बाहर भी स्वधर्म्म विस्तारा
पथ, शिलालेख, सुस्तूप, विहार बनाए
संघारामों से सबको सुख पहुँचाए

उनका शासन सबको मंगलदायक था
व्यापार, कला, कृषि, शिल्प समुन्नायक था
पशु-पक्षी तक समुचित सुविधा पाते थे
मानव तो गुण अशोक ही के गाते थे

सम्राट हर्षवर्द्धन की कीर्ति-कहानी
समता, उदारता, सहनशीलता जानी
वे विद्या, धर्म्म, कला के अनुरागी थे
कहने को थे सम्राट, किन्तु त्यागी थे

सद्धर्म, कला, विद्या, विवेक विस्तारे
पशु-पक्षी, मानव-दल के दुःख निवारे
सर्वत्र स्नेह-समता का स्रोत बहा था
कटु भाव क्लेश का लेश न शेष रहा था

शंकर स्वामी ने ज्ञान-भानु के द्वारा
वेदान्त-व्योम पर पुण्य प्रकाश प्रसारा
सर्वत्र ब्रह्म ही ब्रह्म दृष्टि आता था
अद्वैतवाद का भाव उन्हें भाता था

शक-दल का अति आतङ्क हाय छाया था
इस आर्यजाति का अन्त हन्त! आया था
सर्वत्र देश में 'हाहाकार' मचा था
उस नरक-अग्नि से कोई नहीं बचा था

उच्छृंखलता मद्मत्त गान गाती थी
निर्दयता छम-छम करती मद्माती थी
सहृद्यता सुभगा फूट-फूट रोती थी
करुणा कातर की भाँति प्राण खोती थी

अन्याय असुर मद-मत्त हुआ फिरता था
पशुता-पिशाच बन वज्र-रूप गिरता था
अत्याचारों का ओघ प्राण हरता था
हो स्वार्थ सजग अति क्रूर भाव भरता था

शिशु सर्वनाश की नींद पड़े सोते थे
अवला-दल कुटिल प्रहार-भार ढोते थे
गौओं का रक्त कुठार-पान करता था
कोई न किसी की पीर-भीर हरता था

सुन त्राहि-त्राहि हा, हृदय फटा जाता था
वैरी का बाल न बाँका हो पाता था
थी निपट निराशा-निशा न कुछ भाता था
बस बार-बार भगवान याद आता था

जब आर्य सभ्यता भय से घबराती थी
हँसता था अरि ठंडी होती छाती थी
नैतिकता का वसुधा पर त्राण नहीं था
मानवता का किंचित् कल्याण नहीं था

बिन जले और अधजले शवों की ढेरी
पद-पद पर पाई जाती थीं बहुतेरी
कौए, कुत्ते, गीधों की बन आई थी
उस समय रुद्र ने घोर प्रलय ढाई थी

ग्रन्थागारों में आग लपलपाती थी
ज्ञानी-गुणियों की नष्ट हुई थाती थी
जो व्यक्ति धर्म्म का नाम नेक लेता था
वह दण्ड-रूप प्राणों की बलि देता था

नगरों में जीवित जन फूँके जाते थे
घर-घर में मरघट-दृश्य दृष्टि आते थे
चड़-चड़ कर चंहुदिश चिता जला करती थी
सन्ताप-ताप से, हाय, हृदय भरती थी

सब देश आततायी गण लूट चुके थे
मन्दिर, मठ, धर्म्मालय तक फूट चुके थे
हा, भग्न मूर्तियाँ देख हृदय फटते थे
असहाय हुए सब "राम-राम" रटते थे

शक आर्य सभ्यता देख-देख जलते थे
उनको निज नैतिक धर्म्म-कर्म्म खलते थे
वे आर्य संस्कृति के निश्चय नाशक थे
उद्दण्ड, अधम, बर्बर, नृशंस शासक थे

सब रत्न-राशि परिवार विसार चुके थे
बल-साहस अरिदल के कर हार चुके थे
परिवार-प्रेम की टूटी ललित लड़ी थी
अपने-अपने प्राणों की एक पड़ी थी

पौरुष-शक्ति था तब अस्त कर्मगति हत थी
यों जीवित थी यह जाति किन्तु मृतवत थी
कायरता हर्षित हो हुंकार रही थी
हीनत्व भावना पुनि-पुनि मार रही थी

क्यों नष्ट हो रही आर्यजाति की काया
यह अनघा क्यों हो रही हाय, असहाया
"अति" देख सच्चिदानन्द विवेक-विहारी
करुणामृत-वारिधि बने भक्त-भयहारी

उत्पन्न होगया भक्त अमित बल-धारी
अपनायी उसने पावन पुण्य प्रणाली
कर्त्तव्य कर्म्म शुभ साधन ध्येय अटल था
वह त्याग-तपस्या का सुबोध संबल था

राजा थे पर योगी बन कर रहते थे
होकर प्रसन्न सब आधि-व्याधि सहते थे
सुख से उनको क्या काम. दुःख जीवन था
थी अक्षय त्याग-विभूति, तपस्या धन था

वर वीर विक्रमादित्य निपुण नय नायक
प्रणवीर, धीर, धर्म्मज्ञ, सुधीन्द्र, सहायक
वे साधु-सन्त सम राज-काज करते थे
जनता के सेवक बने दुःख हरते थे

थी एक चटाई उनका विशद बिछौना
मिट्टी के बरतन थे, पत्तल या दोना
राजर्षि अधिकतर शिप्रा में न्हाते थे
अपना जल-घट वे खुद ही भर लाते थे

"बोले—जिस तन में आर्य-रक्त बहता है
जिस मन में ऋषि-आदर्श रमा रहता है
जिस धन को धनी राष्ट्रका धन कहता है
उसका उत्पादक देश, दुःख सहता है

इस से बढ़कर अज्ञान और क्या होगा
निज दुर्गति का अब भान और क्या होगा
उन्नति-पथ में व्यवधान और क्या होगा
जगतीतल पर अपमान और क्या होगा

जब सुदृढ़ संगठित राष्ट्र एक होता है
तब प्रबल शत्रु को खोज-खोज खोता है
शक-दल को मारो, उठो शिथिलता त्यागो
तज भौतिक ममता-मोह वीर वर जागो

तिनके मिल कर दृढ़ बन्धन बन जाते हैं
जिसमें बँध हाथी भी न त्राण पाते हैं
"संघटन-शक्ति का गुण-गौरव पहचानो
तुम अपने को बलहीन-दीन मत जानो

अपकीर्ति मृत्यु से भी बढ़कर होती है
तप-तेज प्रतिष्ठा गुण-गौरव खोती है
प्रिय आर्य्य वीर वर, उठो, त्याग कायरता
है प्राप्त तुम्हें आत्मा की उच्च अमरता"

सुन विक्रम के वर वचन मोह-तम भागा
हो गया विवेक-विहान राष्ट्र अब जागा
फिर मचा घोर घमसान जगी रणचण्डी
शक-दल का हुआ विनाश मिटे पाखण्डी

मालव-वीरों ने वह वीरत्व दिखाया
जिसके कारण मिट गयी शत्रु की माया
हो गयी शकों से शून्य धर्म्ममय धरणी
फिर दमक उठी सर्वत्र पुण्यमय करणी

नृप वीर विक्रमादित्य विश्व को भाये
वे दुख-भंजक, रंजक, शकारि कहलाये
यह भूमि गर्व-गौरव से फूल रही थी
सब प्रजा प्रेम-झूले में झूल रही थी

'गणतन्त्र' राज्य के अधिपति कहलाते थे
पर, राष्ट्र-कोष से कभी न कुछ पाते थे
वे अपनी सेवा आप किया करते थे
कर निज श्रम से निर्वाह जिया करते थे

है विश्व-विदित तप-त्याग वीर विक्रम का
अविचल स्वदेश-अनुराग वीर विक्रम का
है जन-जन पर आभार वीर विक्रम का
है हृदयों पर अधिकार वीर विक्रम का

संस्कृति का सौरभ उड़ा धर्म्ममय मति थी
प्रिय आर्य सभ्यता बची, कर्म्म में गति थी
अत्याचारों को मेंट न्याय विस्तारा
सह लिये दुसह दुख, किन्तु न धैर्य बिसारा

सुख-शान्ति-सुधा-रस राष्ट्र पान करता था
ज्ञानी-गुणियों का देश मान करता था
विद्वत्समाज वर ब्रह्मदान करता था
सब जग विक्रम का क़ीर्ति-गान करता था

ऋषि वाल्मीकि ने काव्य-छटा छिटकायी
श्री वेद व्यास ने गौरव-गाथा गायी
कवि कालिदास ने कविता-सुधा पिलाई
कर अमर काव्य-रचना कल कीर्ति कमाई

शृंगार, नीति, वैराग्य-ज्ञान के दाता
राजर्षि भरतहरि प्रकटे विज्ञ विधाता
कवि सूरदास श्रीकृष्ण-भक्ति में रत थे
कवि तुलसिदास भगवान राम अनुगत थे

कवि वाल्मीकि ने अमर राम-गुण गाया
उनसे ही यह वर वृत्त विश्व ने पाया
अनुपम आचार-धर्म्म की विमल कहानी
रामायण द्वारा ही सब जगने जानी

कविवर कबीर ने पुण्य-पन्थ दिखलाया
आडम्बर, द्रोह, दम्भ का दुर्ग गिराया
कवि सन्त सहिष्णु समन्वय के साधक थे
वे व्यापक तत्व-सत्वगुण-आराधक थे

श्री तुलसिदास ने प्रेमामृत वरसाया
जन-जन को रामचरित्र पवित्र सुनाया
आचार-विचार, संस्कृति, प्रेम, प्रतिष्ठा
मानवता का आदर्श, सुनैतिक निष्ठा

सद्धर्म-मर्म, व्रत, उत्सव, चरित बखाने
व्यवहार विहित सिद्धान्त श्रेष्ठतम जाने
नाना पुराण निगमागम सार निचोड़ा
जीवन का कोई तत्व न कवि ने छोड़ा

कवि सूरदास से अनुपम कृष्ण कहानी
सुन्दर स्वाभाविक काव्य-कला में जानी
वे सार्वभौम भ्रातृत्व सिखाने आए
नित भक्ति-प्रेम-पीयूष पिलाने आए

पद-काव्य कहें या शुद्ध हृदय की वाणी
मानवता की सद् शक्ति-भक्ति कल्याणी
श्री वल्लभ, रामानुज, चैतन्य महामति
प्रकटे नरसी, जयदेव और विद्यापति

भारत ही के थे तानसेन, टोडरमल
वर विज्ञ बीरबल प्रतिभा के सुन्दर फल
वे देश-काल से परे सत्य, शिव, सुन्दर
सद्भाव पूर्ण, श्रुति-सुखद, सुमधुर-मनोहर

कवि-ऋषि-मुनियों ने मानवता विस्तारी
निज धर्म्म-कर्म्म की ध्रुवता सदा प्रचारी
वे प्राणि मात्र के प्रेमी सुख-साधक थे
प्रभु परम तत्व के अनुपम आराधक थे

श्री कौशल्या पति-प्रेम धर्म्म की रानी
है जिनकी अजर, अमर आदर्श कहानी
वन भेज पुत्र, प्रिय पति के वचन निबाहे
धीरज धर ज्यों-त्यों चौदह बरस बिताए

थी सती ऊर्मिला 'जती' लखन की जाया
दोनों ने त्याग-तपस्यादर्श निभाया
प्रभु-सेवा में निज जीवन-जन्म बिताया
होगये धन्य वे, धन्य होगयी काया

सीता, सावित्री, अनुसूया, दमयन्ती
गार्गी, मैत्रेयी शैव्या-सी सतवन्ती
पति-चरणों में प्राणों का अर्घ चढ़ाया
पातिव्रत का अनुपम आदर्श दिखाया

वे धर्म्म-कर्म्म-सम्पन्न ज्ञान-गरिमा थीं
वे सती-साध्वी जगज्ज्योति-महिमा थीं
उनके अनुगत हो चलीं विश्व की नारी
वे वन्दनीय थीं विमल विभूति हमारी

भगवान ! भक्ति में मीरा थी मतवाली
की ग्रहण अहल्या ने भी पुण्य प्रणाली
झाँसी की रानी रण में जा किलकारी
पद्मिनी आदि की गौरव-गाथा प्यारी

जब क्षत्राणी रिपु से न त्राण पाती थीं
तो हो निरुपाय चिता चिन जल जाती थीं
वे पड़ी हुई हैं, अभी राख की ढेरी
जिनसे चिनगारी फूट रहीं बहुतेरी

उन वीर-विदुषियों को न मोह था तन का
व्रत-पालन ही था मुख्य लक्ष्य जीवन का
सब सदा सतीत्व हेतु जीती-मरती थीं
पति-चरणों पर सब कुछ अर्पण करती थीं

गुरु नानकजी ने सत्य नाम पद गाया
दे सिक्ख धर्म्म को जन्म अमर पद पाया
पर-छिद्र देखना, अपने दोष दुराना
अत्यन्त निंद्य या घोर अधम अघ जाना

संकीर्ण भावना त्याग प्रेम विस्तारो
रह जन-सेवा संलग्न स्वजन्म सुधारो
आडम्बर, वैर-विरोध, घृणा, मद छोड़ो
बन सत्य-भक्त शुचिता का सार निचोड़ो

आत्मालोचन, अन्तर्मुखता-व्रत धारो
संयमी, सुधी हो मानव-धर्म्म प्रचारो
गुरु नानक देव सफल हो स्वर्ग सिधाए
पुनि शिष्य-प्रशिष्य धर्म-वेदी पर आए

मानवता, बन्धु-भाव के प्रबल प्रचारक
वे शान्ति, सत्य, समता के वर विस्तारक
गुरु देश-देश में रमे प्रेम संचारा
पुनि सिक्ख-धर्म्म की बही देश में धारा

व्यक्तित्व त्याग-तप-पूर्ण रहा गुरुवर का
था मोह उन्हें परिवार न पुर का घर का
वे भेद-भाव का दुर्गम गढ़ ढाते थे
सब को सप्रेम समता से अपनाते थे

गुरु तेग बहादुर, गुरु गोविन्द प्रतापी
दे प्राण-दान संस्कृति-मर्यादा थापी
थे अन्य धर्म्मधर धीर-वीर अनुरागी
'सत श्री अकाल' के भक्त तपस्वी-त्यागी

गुरुओं ने अपने पुण्य प्रभाव प्रसारे
बलिदान दिये; वीरत्व भाव विस्तारे
प्राणों की माया-ममता त्याग चुके थे
कर्त्तव्य-निष्ठ जीवन पर जाग चुके थे

खा घास-पात की रोटी जन्म बिताया
पर, धन्य न निश्चित पथ से पैर डिगाया
इन अनुपम आदर्शों की अमर कहानी
कण-कण कहता है, सुनी, विश्व ने जानी

हैं राजपूत वीरों की अमर कथाएँ
प्रण पर दे प्राण, सहीं महान विपदाएँ
थे भामाशाह विपुल सम्पति के दाता
जन्मे भारत में अगणित राष्ट्र-विधाता

राणा प्रताप से त्यागमूर्ति तपधारी
निज जन्मभूमि जननी के प्रेम-पुजारी
सभ्यता संस्कृति-संस्थापक शुभकारी
बल-साहस के कल केन्द्र सुयश-अधिकारी

सद्गुरु समर्थ के शिष्य समर्थ शिवाजी
जिनकी स्वदेश-अनुरक्ति गगन में गाजी
अरि-रमणी को जब सुभट पकड़ कर लाए
तब वीर शिवाजी ने ये वचन सुनाये

"यदि मैं भी तुझ-सी सौम्य-सुघड़ मा पाता
तो निश्चय ही तुझ-सा सुन्दर बन जाता"
वह महिला सादर उसके घर पहुँचाई
उँगली तक छूई और न नेक छुआई

दादू, पलटू, सुन्दर, मलूक नर नामी
रविदास आदि थे सत्पथ के अनुगामी
वे विश्व-प्रेम-हित-हेतु धरा पर आए
सबने मानव को मंगल-गान सुनाए

नरसी महता की भक्ति-भरी पद-माला
कल्याण-कारिणी, विश्रुत, विशद, विशाला
वैष्णव वह है, जिसने पर दुःख निवारे
बन भगवत-भक्त पतित-पापी उद्धारे

गोरख, समर्थ गुरु ने सुपन्थ सरसाया
श्री तुकाराम ने प्रेम-प्रसंग सुनाया
गाये अभंग सत्संग-रंग बरसाया
भगवान-भक्ति का भाव सभी को भाया

ऋषि दयानन्द आदित्य बाल ब्रह्मचारी
थे त्याग-तपस्या-पुंज धर्म ध्रुव धारी
मानवता के उद्धार हेतु वे आए
मानव-मंगल-वेदी पर प्राण चढ़ाए

स्वातन्त्र्य, स्वराज्य, स्वत्व समझाने वाले
वैदिक संस्कृति-सभ्यता सिखाने वाले
निज गुण-गौरव-गरिमा अपनाने वाले
वर बुद्धिवाद का विभव बढ़ाने वाले

वे जन-जीवन की ज्योति जगाने आए
भूले-भटकों को सुपथ सुझाने आए
गुण-कर्मों से निरखे-परखे नर-नारी
समता, सुनीति, सद् प्रीति रीति विस्तारी

दुर्दम्भ दैत्य का दुर्ग विदारा तुमने
छल, छद्म, छूत का भूत उतारा तुमने
तुमने विष-घूँट पिये, पीयूष पिलाया
शुभ सत्य सँदेशा जन-जन तक पहुँचाया

श्री राम-कृष्ण से परमहंस की वाणी
मानव को मंगलमूल हुई कल्याणी
थे सेवा, क्षमा, दया के प्रबल प्रचारक
तप, त्याग, भक्ति, वैराग्य, धर्म-संचारक

वर विज्ञ विवेकानन्द धर्म-धी पण्डित
अध्यात्मवाद अनुरक्त, ज्ञान-गुण-मण्डित
विचरे वे देश-विदेश स्वगौरव गाया
मानवता का शंकर सन्देश सुनाया

अभिराम राममोहन का उज्ज्वल जीवन
बन गया भद्र भावों का सुन्दर चिन्तन
वे देश-भक्त, अनुरक्त, शक्त साधक थे
सर्वदा सत्य-शुचिता के आराधक थे

जिसने हिन्दी भाषा का भाग्य जगाया
वह हरिश्चन्द्र भारत का इन्दु कहाया
बन गयी 'भारती' भारत-भर की भाषा
हो रही पूर्ण अब उसकी सद् अभिलाषा

गोपाल कृष्ण गोखले ज्ञान-गरिमागर
भारत-भूपर चमके बन पुण्य प्रभाकर
नित देश-जाति का गौरव-गान किया था
निज जन्म-भूमि का सुयश महान किया था

श्री रामतीर्थ को भौतिक भाव न भाया
सोता अध्यात्मवाद आ पुनः जगाया
विचरे वे देश-विदेश ईश-गुण गाये
वैदिक युग के उत्तम आदर्श दिखाये

तप तिलक तपस्वी लोकमान्य का छाया
'स्वातन्त्र्य' जन्मसिद्धाधिकार बतलाया
गीता का धर्म्म-मर्म्म सबको समझाया
निष्काम कर्म्म-प्रियता का पाठ पढ़ाया

वे कर्म्मयोग के केन्द्र ज्ञान-गुण-आकर
अन्याय अन्ध तम को थे पुण्य प्रभाकर
वे राजनीति के प्राण-त्राण-दाता थे
वे भारत-भाल तिलक युग-निर्माता थे

श्री मालवीय महाराज संस्कृति-सागर
सद्धर्म्मधाम, अभिराम नीति-नय-नागर
वे भारतीयता-भानु भारती-प्यारे
भारतमाता के भक्त, पुत्र, दृगतारे

वे सत्यनिष्ठ, शुचिता-ऋजुता के नायक
मानवता की कल कीर्ति, सर्व सुख-दायक
जन-जनता को चारित्र्य सिखाने आए
ऋजु राजनीति की रीति दिखाने आए

नरसिंह लाजपतराय पुण्य के प्रेरे
कर्म्मिष्ठ, धीर, गम्भीर सत्य-शुचि-चेरे
वे निर्भयता के धाम धन्य बड़भागी
निज देश-जाति के भक्त-शक्त अनुरागी

थे भारतीय भावों के प्रबल प्रचारक
कुटिला कुनीति के शत्रु सबल संहारक
विचरे वे देश-विदेश स्वगौरव गाया
मानवता का अनुपम आदर्श दिखाया

श्री श्रद्धानन्द निपुण नेता-नायक थे
गुरुकुल-शिक्षा-पद्धति के उन्नायक थे
सद्धर्म्म-संस्कृति आर्ष भाव विस्तारे
वैदिकता के मानव-आदर्श प्रचारे

थे धन्य कवीन्द्र रवीन्द्र कलाकृति मण्डित
विकसाया विमल विश्वबन्धुत्व अखण्डित
नित प्राणिमात्र पर स्नेह-सुधा बरसाई
मानव-मंगल की अमर भारती भाई

कविता-कानन में सतत विचरने वाले
अभिनव मौलिक भावों को भरने वाले
बहती थीं नित नूतन विचार-धाराएँ
जो चाहें, आएँ ज्ञान-गंग से न्हाएँ

गुरु गाँधीजी की सत्य-अहिंसा-धारा
वह उठी विश्व में अभिनव भाव प्रसारा
थे त्याग-तपस्या-सिन्धु प्रेम-परिपालक
नम्र, न्याय-नीति-आदर्श, सत्य-संचालक

वह अमर शक्ति संसार हिलाने वाली
मृतकों को जीवन-मूरि खिलाने वाली
बन उषा समुज्ज्वल ज्योति जगाने वाली
सद्‌ज्ञान और सन्मार्ग सुझाने वाली

वह विमल विभूति विश्व में जब आई थी
कल्याण-त्राण प्राणों में भर लाई थी
दानव को मानव-महिमा समझाई थी
बन्धन-विमुक्ति की वर विधि बतलाई थी

मन, वचन, कर्म्म में शुचि समता संचारी
अपनी संस्कृति-सभ्यता सदैव प्रचारी
वह न्याय-नीति का कोप महा मानव था
वह स्नेह दया-आगार विश्व-वैभव था

अध्यात्मवाद-पीयूष पिलाने वाला
मृत मानवता में जीवन लाने वाला
फिर से स्वतन्त्रता-सूर्य उगाने वाला
निद्रा-तन्द्रा को तोड़ जगाने वाला

कट गया दासता-पाश, त्रास-युग बीता
भौतिकता पर अध्यात्म, त्याग-तप जीता
तामस ने सात्विक शुद्ध भावना पाई
हिंसा पर अटल अहिंसा की छवि छाई

श्री योगिराज अरविन्ददेव का साधन
है विश्व हेतु-हित मानवता-आराधन
अध्यात्मवाद का तत्व-महत्त्व दिखाया
अति गूढ़-ज्ञान-गौरव सबको समझाया

वल्लभ भाई पटेल की निर्भय वाणी
उस लोह-पुरुष की गति-मति अति कल्याणी
सुन-सुन हुंकार जान जनता में आई
जग गयी ज्योति तुम-सी विभूति जब पाई

'नेताजी' श्री सुभाष की अमर कहानी
तप-त्याग-भरी भावना विश्व ने जानी
आज़ाद-हिन्द-सेना के वे सेनानी
भारत-स्वतन्त्रता के अनन्य अभिमानी

राजेन्द्र सत्य, शुचि, सौम्य गुणज्ञ-गुणाकर
भारत-भावों की मंजु मूर्ति ध्रुवता-धर
जन-जन के श्रद्धा-भाजन सबल सहायक
वे राष्ट्र-विधाता : लोक-तन्त्र के नायक

हैं राजनीति-रमणी के कन्त जवाहर
उड़ रही सुयश-सौरभ-सुगन्धि घर-बाहर
भारत की शासन-रीति-नीति दरसाई
हो गया प्रभावित विश्व सुछवि छिटकाई

वर बुद्धिवाद के प्रेरक प्रबल प्रचारक
अध्यात्मवाद के पोषक, विमल विचारक
निज धर्म्म-कर्म्म भाषा-भूषा-अनुरागी
हैं सन्त विनोबा, धन्य तपस्वी त्यागी

जिससे समाज-सेवा जो बन आती थी
वह भक्ति-स्नेह श्रद्धा से की जाती थी
छोटी-सी सेवा भी अति हित-कारक थी
संकीर्ण स्वार्थ भावों की संहारक थी

पितु-आज्ञा-पालन, मातृ-भक्ति की महिमा
पत्नीव्रत, पातिव्रत की अप्रतिम प्रतिमा
वह भ्रातृ भाव, वह त्याग-तपस्या वैभव
वह सत्य धर्म्म-व्यवहार, ज्ञान, गुण-गौरव

विद्या, धन, बल का सदुपयोग होता था
अध्यात्म हृदय का ताप-तिमिर खोता था
था सत्य, न्याय आधार सभी के मन में
शुचिता, ऋजुता भरपूर रही जीवन में

भक्तों ने दे बलिदान स्वधर्म्म बचाया
निज आत्म-शक्ति का पुण्य-प्रकाश दिखाया
जो सत्य-प्रेम के रहे सदैव पुजारी
वे धर्म्म-धुरन्धर, धन्य स्वर्ग-अधिकारी

जिनकी संकेत-कथा ऊपर आई है
जिन महा मानवों की विभूति छाई है
वे भारतीय संस्कृति के उन्नायक थे
सद्गुण-गरिमा-गायक, नैतिक नायक थे

प्रत्यावर्त्तन

कौशल्या-नन्दन धराधाम में आये
तब अवध पुरी में घर-घर बजे बधाए
श्री रामचन्द्र मर्यादा पुरुषोत्तम थे
वे सत्य-धर्म्म-अवतार सबल-सक्षम थे

थी एक पवित्रा पत्नी राजकुमारी
माता समान थीं शेष सभी पर-नारी
पित-आज्ञा-पालक माता का अनुचर था
गुरुजन का भक्त अनन्य धन्य नर वर था

वह भ्रातृ-भाव की मूर्ति प्रेम-सागर था
वह भक्त और भगवान् सुगुण आगर था
वह साधु-सन्त का सेवक-संरक्षक था
दुष्कर्म दुष्ट दानव दल को तक्षक था

वह त्याग-तपस्या का सुदिव्य जीवन था
वह कर्मवीरता-निधि का ध्रुव धी-धन था
वह धर्म-प्रेम का पुंज वचन-पालक था
वह सत्य लोकमत का दृढ़ संचालक था

आदेश पिता का मान रमे वन-वन में
था दुख-सुख, हर्ष-विषाद न कुछ भी मन में
सीताजी साथ रहीं वन कर प्रतिछाया
भाई लक्ष्मण ने प्रण कर प्रेम निभाया

वन-वासी-जीवन में अति कष्ट उठाये
पर हँस-हँस कर वे चौदह वर्ष बिताये
तन, मन था शुचि, सम्पुष्ट सदा शुभकारी
आत्मा था विमल विशुद्ध धर्म ध्रुवधारी

हनुमान राम से मिले भक्ति दरसाई
निज परिचय दे 'सेवक' उपाधि अपनाई
कर सेवा वह अनुपम आदर्श दिखाया
हो गये धन्य; हो गयी अमर यश-काया

मारुत-सुत वन में बने राम के प्यारे
सच्चे सेवक, सद्भक्त, सुमित्र-सहारे
जो सत्य धर्म्म-ध्रुवता-पथ अपनाता है
संसार उसीका सेवक बन जाता है

सुग्रीव मित्र ने सख्य-भाव विस्तारा
उस बीहड़ वन में पौरुष-प्रेम पसारा
संकट में साथी रहा नगर-घर छोड़ा
प्रभु रामचन्द्र से कभी नहीं मुख मोड़ा

हनुमान भक्त अनुरक्त बाल ब्रह्मचारी
अंगद, सुग्रीव अनन्य धन्य बलधारी
नल-नील, सुखेन, सुधी, सेवक हितकारी
थे रामचन्द्र के सभी सहायक भारी

गुह, कोल, किरात, निषाद आदि जो आए
सब रामचन्द्र ने स्नेह सहित उर लाये
क्या ऊँच-नीच सब समता-रस साने थे
प्रभु ने वे आत्म-रूप ही मन माने थे

शुचिता, दृढ़ता, सद्भाव, स्नेह, छवि-छाया
कर्त्तव्य कर्म्म, सद्धर्म्म, न्याय-नय दाया
जो राष्ट्र इन गुणों से सूना रहता है
वह संकट-सरिता में सदैव बहता है

रावण ने धर्म्म, न्याय-मर्यादा त्यागी
सोगया सत्य : दुर्भाव-दम्भ-द्युति जागी
सब सुहृदों ने शठ बार-बार समझाया
कर त्याग विभीषण, भीषण पाप कमाया

जब त्यक्त विभीषण हुआ सत्य-शरणागत
तब रामचन्द्र ने किया स्नेह से स्वागत
जो न्यायशील निष्पक्ष भाव रखता है
वह शुद्ध प्रेम का सुखद स्वाद चखता है

था प्रेम-धर्म्म ही साथ सत्य का बल था
बस रामचन्द्र के पास यही संबल था
वनवासी ने वनचारी चमू सजाई
सिद्धान्त-हेतु लंका की ओर बढ़ाई

प्रभु ने रावण का घोर घमण्ड घटाया
कर पराभूत परलोक तुरन्त पठाया
पीड़ित जनता के दारुण दुःख निवारे
फिर न्याय-नीति के भव्य भाव विस्तारे

कर लंक-विजय अन्याय-अधर्म्म मिटाये
भगवान राम के काम धन्य जो आये
वे शूरवीर सैनिक निज धाम सिधाये
दी विदा स्नेह से हँस-हँस कंठ लगाये

लिप्सा न राज्य की, लोभ नहीं था धन का
अन्याय नष्ट हो ध्येय यही जीवन का
दी सौंप विभीषण को रावण की लङ्का
बज उठा विश्व में राम-विजय का डङ्का

भगवान राम ने सत् आदर्श दिखाया
कल्याण-धाम का शुभ सन्मार्ग सुझाया
दानवता का संहार किया प्रभुवर ने
मानवता का उद्धार किया रघुवर ने

सोने की लंका नहीं राम को भाई
जननी-सी जन्मभूमि ही सदा सुहाई
जिसकी महिमा ऋषि-मुनियों ने जानी है
जो स्वर्गधाम से भी बढ़ कर मानी है

बोले—'लक्ष्मण, अब व्यर्थ न समय विताओ
अविलम्ब अवध चलने का साज सजाओ
माता, प्रिय, परिजन, पुरजन घबराएँगे
ऋषि-मुनि, गुरुजन भी चैन नहीं पाएँगे

यदि अवधि बिता हम लोग अवध जाएँगे
तो निश्चय ही प्रिय भरत नहीं पाएँगे
वे हो हताश चिन्ता से अकुलाएँगे
जाने क्या-क्या संशय मन में लाएँगे'

श्रीराम, लखन, सीता को अंक बिठाये
सुग्रीव, विभीषण, अंगदादि अपनाये
चर-चर-चर 'पुष्पक' चला प्रेम-रस पागा
सर्वत्र कोलाहल हुआ, सुप्त जग जागा

पथ में जब ऋषि-मुनियों के आश्रम आते
उनके प्रति सब ही श्रद्धा-पुष्प चढ़ाते
प्रिय, मित्र, मिलापी, भक्त जहाँ जब पाये
उनके प्रति भी प्रभु ने प्रेमाश्रु बहाये

सागर, सरिता, गिरि, वन, पुर, पथ जो आये
पुष्पक के पथिकों को वे सभी सुहाये
ऊपर तो वायु-यान उड़ता जाता था
नीचे, नगरों से विजय-घोष आता था

उल्लेखनीय पुर-वन जो-जो आते थे
श्री राम सती सीता को दिखलाते थे
क्या घटना, कहाँ घटी; सबको समझाई
उस संकट की फिर मधुर याद अब आई

सीताजी चर्चाओं में मग्न हुई थीं
नव दृश्य देखने में संलग्न हुई थीं
कौतूहल-वश वे प्रश्न पूछती जातीं
समुचित उत्तर सुनकर असीम सुख पातीं

सब चित्रकूट पर गये; त्रिवेणी न्हाये
साथी प्रियजन को दिव्य दृश्य दिखलाये
धर बटुक-रूप हनुमान अवध में आये
श्री भक्त भरत को शुभ संदेश सुनाये

भगवान् भरत ने तप-तप कर कृश काया
बन रामचन्द्र का प्रतिनिधि राज चलाया
वे जन-सेवक सबके मंगलकारी थे
मानव क्या, जीवमात्र के दुखहारी थे

प्रभु-प्रत्यावर्त्तन-हर्ष न हृदय समाया
हनुमान बटुक को पुनि-पुनि कंठ लगाया
वे पवन-पुत्र हैं, रामचरण-अनुरागी
यह जान भरत की भक्ति और भी जागी

मारुत-सुत ने सारी रण-कथा सुनाई
किस भाँति लंक पर विजय राम ने पाई
कपि वीरों की सेना किस भाँति सजायी
सब बने राम के क्यों अनन्य अनुयायी

जिनके वियोग में दुसह दुःख सहते थे
धर तापस वेश विरक्त-व्यथित रहते थे
वे राम, लखन, सीता वन से आए हैं
सुन भरत हर्ष से आकुल उठ धाए हैं

प्रिय, परिजन, अनुज, विप्र, गुरु, कवि, ब्रह्मचारी
सैनिक, शासक, मन्त्री, अमात्य, अधिकारी
सब चले भरत के साथ मुदित कर मन को
श्रीराम, लखन, सीता के शुभ दर्शन को

पुष्पक विमान जब अवधपुरी में आया
नर-नारी हुए प्रसन्न जन्म-फल पाया
श्रीराम, लखन, सीता के पाँव पखारे
सुग्रीव, विभीषण, पवन-पुत्र सत्कारे

मिल भरत तपस्वी ने स्वजन्म फल पाया
पावन पद-रज को सादर शीश चढ़ाया
माताओं ने सौमित्र, राम-सिय पाये
वर्षों से बिछुड़े प्राण आज अपनाये

गुरु, मुनि, परिजन का परिचय प्रथम कराया
पुनि वानर-वीरों का महत्त्व बतलाया
रण में जिसने जो करतब कर दिखलाया
उसका वृतान्त सबको सानन्द सुनाया

जय रामचन्द्र, सीता माता की जय हो
जय लक्ष्मण, जय हनुमान, लोक निर्भय हो
पुष्पक विमान अभिराम राम लाया है
तू धन्य, विश्व-वैभव ललाम लाया है

कर अवधपुरी की सुन्दर-सुखमय झाँकी
सरयू-सरिता-छवि मंजु-मनोहर बाँकी
सुग्रीव, विभीषण, अंगद स्वपुर सिधारे
हनुमान अवध में रहे राम के प्यारे,

ऊर्मिला प्राण-धन को पा फूल रही थी
वह हर्ष-हिंडोले में झुक झूल रही थी
उसने कल्याण-त्राण दोनों पाये थे
भगवान राम के साथ—नाथ आये थे

लक्ष्मण-ऊर्मिला मिलन था दिव्य अलौकिक
स्वर्णिम प्रभात से हुई दिशा आलोकित
पति ने प्रिय पत्नी को आ कंठ लगाया
पत्नी ने पुनि आदर्श प्राणपति पाया

सासों के पैरों पड़ सीता सतवन्ती
करती थी बार-बार श्रद्धा से विनती
हिल-मिल योरानी भक्ति-भाव दरसातीं
पग-धूलि जनक-तनया की शीश चढ़ातीं

मणि, स्वर्ण निछावर कर आरती उतारी
जाती थीं माएं बार-बार बलिहारी
वात्सल्यपूर्ण अनुरक्त अनन्य हुई थीं
पा राम-लखन-सीता को धन्य हुई थीं

जो सुख माता कौशल्याजी ने पाया
श्रीमती सुमित्रा ने जो हर्ष मनाया
उसका वर्णन ये शब्द न कर सकते हैं
गागर में सागर कैसे भर सकते हैं

कैकेयी निज करणी पर अति सकुचायी
पर रामचन्द्र ने अविरल भक्ति दिखायी
कर चरण-वन्दना श्रद्धा-भाव प्रसारा
बह उठी केकयी की आँखों से धारा

अभिषेक

गज पर चढ़ रामचन्द्र नगरी में आए
कर दर्शन जनता ने जीवन-फल पाए
लोलुप लोचन परितृप्त; हृदय हर्षाये
मागध-चारण ने प्रभु के गुण-गण गाये

तोरण-वन्दनवारों से नगर सजाया
बहु विधि शोभा-सुषमा ने दृश्य दिखाया
सुमधुर बाजों की मृदु ध्वनि बाज रही थी
रघुकुल की गौरव-गरिमा गाज रही थी

जन-जन ने मानो जीवन-फल पाए थे
घृत-दीप जलाए : मंगल-पद गाए थे
हृदयों में था उल्लास, भक्ति उमगी थी
सर्वत्र दिवाली की द्युति-ज्योति जगी थी

जन-सागर में आनन्द उमड़ आया था
सब थे प्रसन्न सर्वत्र हर्ष छाया था
निज काम-धाम तज पुरवासी धाये थे
भगवान राम के शुभ दर्शन पाये थे

उत्सुक नर-नारी हाट-बाट पर छाये
छत्तों-अटारियों पर बैठे मुँह बाए
भगवान राम इस पथ से ही जायेंगे
हम उनके शुभ दर्शन का फल पायेंगे

सब सुविधा थी पर चैन नहीं पाते थे
कर याद राम-लक्ष्मण को अकुलाते थे
लौटे अब सबके सुदिन; सुमंगल छाये
सानुज सन्नीक राम अपने घर आये

विन राम अवध ने चौदह वर्ष विताये
व्याकुल-विह्वल हो कष्ट-क्लेश अति पाये
श्री-हीन हुई थी जिस नगरी की काया
फिर जाग उठी उसकी मन-मोहक माया

वह ऋद्धि-सिद्धि-वह सुख-समृद्धि छवि-छाया
शुभ रीति-नीति की मंगलमय मृदु माया
कण-कण, अणु-अणु ने भव्य-भाव उमगाये
जब अवधपुरी में रामचन्द्र फिर आये

जो ऋषि-मुनियों से सेवित सदा रही है
जिसमें सुधर्म्म की धारा सदा बही है
जिसको प्रण-पालन प्राणों से प्यारा है
जिसने वसुधा पर वैभव विस्तारा है

जिसमें रघु की यश-लता लहलहाती है
जिसमे सद्धर्म्म-पताका फहराती है
जिसके ऋषि-मुनि गुण गा-गा थक जाते हैं
जिसके वर्णन को कवि न शब्द पाते हैं

जिस पर वियोग के विष-बादल घहराये
जिस पर दुख-संकट टीड़ीदल-से छाये
जिसने ज्यों-त्यों कर चौदह वर्ष बिताये
उस अवधपुरी में राम आज फिर आये

जिसने लक्ष्मण-से धीर-वीर जन्माये
जिसको शत्रुघ्न-भरत से भाई भाये
जिसने सीता-सी जनक-नन्दिनी पाई
जिसने कौशल्या-सी माता अपनाई

जो सुधी सुमित्रा की महिमा गाती है
तप-त्याग ऊर्मिला का जो दरसाती है
जिसने दशरथ नृप मुक्ति-धाम पहुँचाये
उस अवधपुरी में रामचन्द्र फिर आये

जिसने कैकेयी की छल-छवि छिटकाई
जिसने मंथरा-कुनीति-भीति दरसाई
जिसने युवराज बनाया वन का वासी
वह जन्मभूमि थी चिर दर्शन की प्यासी

पशु-पक्षी, कीट-पतंग प्रेम-पुलकित हैं
वन-गुल्म, लता-तरु, पल्लव, पुष्प मुदित हैं
सर-सरिता, वापी, निर्झर, कूप हिलोरे
सुखमय समीर ने किये अनेक निहोरे

सरयू की निर्मल धार हुमक हर्षायी
मानो उसने अपनी विभूति फिर पायी
यमुना, सरस्वती सुत, धवल ध्रुवधारा
तीनों ने कर अभिषेक सुपुण्य प्रसारा

उजड़ी-सी अवधपुरी भी मन को भाई
उसके कण-कण की सुषमा उन्हें सुहाई
अणु-अणु में मातृभूमि के दर्शन पाये
भगवान राम फिर जन्मभूमि में आये

ऋषि-मुनियों ने विधिवत अभिषेक कराया
अभिषिक्त हुए श्रीराम राज-पद पाया
दे दान-मान-सम्मान विप्र सत्कारे
ज्ञानी-गुरुओं के चरण शीश पर धारे

कर मुनि वशिष्ठ ने तिलक सुमन्त्र सुनाये
रघुकुल-गौरव-गरिमा के गुण-गण गाये
विप्रों ने आशिष दे सुभाव दरसाये
सबने प्रसन्न हो कर प्रसून बरसाये

गुरु, पूज्य, पुरोहित, वीतराग, संन्यासी
सबकी प्रसन्नता उलही कल्पलता-सी
वे प्रमुदित मन आशीर्दान देते थे
स्वागत करते; सम्मान-मान देते थे

ले दान-दक्षिणा याचक, विप्र अघाये
मुनियों ने यज्ञ, पुण्य, गोदान कराये
वर वेदध्वनि से ध्वनित हो उठी धरणी
फिर दमक उठी भगवान राम की करणी

भेंटें अर्पित करते सप्रेम नर-नारी
जन-जन ने श्रद्धा से आरती उतारी
दधि, दूब, फूल, फल, रोचन, अक्षत, चन्दन
नव तुलसीदल कर भेंट किया वर वन्दन

कन्याओं ने लाजा-प्रसून बरसाये
महिलाओं ने मिल मंगल-गायन गाये
स्वस्त्ययन पुरोहित-पण्डितजन करते थे
कर सामगान बटु भद्र भाव भरते थे

सिर पर धर मंगल-कलश सुवासिनि आई
भर-भर कर स्वर्ण थाल में भेंटें लाई
सबने प्रभु-दर्शन कर जीवन-फल पाया
प्रिय पुत्रजन्म का-सा आनन्द मनाया

सित छत्र-चमर धनु-बाण-धार सुख साजे
श्रीराम राजगद्दी पर सविधि विराजे
सौभाग्य-सूर्य फिर उगा, हर्ष उमड़ाया
श्री 'राम-राज्य' का सुयश दशों दिशि छाया

शासन का भारी भार राम पर आया
या जन-सेवा का पुण्य कार्य अपनाया
वनवासी से अवधेश धन्य कहलाए
फिर अवधपुरी मे घर-घर बजे बधाए

भगवान राम थे लोकतन्त्र के नायक
सद्धर्म-धाम, अभिराम, सुवैध विधायक
वे लोकतन्त्र के साधक-संस्थापक थे
सच्चे सेवक यों कहने को शासक थे

ऋषि-मुनियों ने प्रभु को वरदान दिया था
अवधेश बनाकर मान प्रदान किया था
विद्वत्समाज सत् परामर्श दाता था
शासन जनतन्त्रवाद में बल पाता था

समझी थी सबने सच्चरित्र की महिमा
नैतिकता की कल कीर्ति, गुणों की गरिमा
आचारहीन मानव दानव बनता था
आचारयुक्त दानव मानव बनता था

निष्काम कर्म, निःस्वार्थ भाव जागा था
भौतिकता-तम, अविवेक-अन्ध भागा था
सद्ज्ञान-सूर्य की ज्योति जगमगाई थी
शुचि रीति-नीति ही तब सबको भाई थी

फिर से नवजीवन राज-काज में आया
मानो पतझड़ में वर बसन्त सरसाया
उत्साहयुक्त अधिकारीवृन्द सजग थे
घर, नगर, पैंठ, बाजार सभी जगमग थे

राज-व्यवस्था

श्री रामराज्य में सत्य-अहिंसा बल था
शासन-सेवा का कार्य निपट निश्छल था
जीवन था धर्म्म: धर्म्म ही तब जीवन था
सम भाव, स्नेह, सन्तोष, तपस्या धन था

नैतिकता से ही राज-काज चलता था
नैतिक बल से सारा समाज चलता था
नैतिक जीवन नागरिक भाव भरता था
जनता को मन कर्त्तव्यनिष्ठ करता था

सर्वत्र राज्य में शान्ति, कान्ति, समता थी
शासक-शासित में प्रेम-प्रीति ममता थी
निज अधिकारों का सदुपयोग करते थे
मिल-जुल कर सब ही कष्ट-क्लेश हरते थे

तब संविधान-शासन में तत्व नहीं था
क़ानूनों का कुछ अधिक महत्त्व नहीं था
मानवता अति ऊँची समझी जाती थी
चारित्र्य-चन्द्रिका ही छवि छिटकाती थी

अतएव प्रजा-राजा स्वधर्म्म-पालक थे
दोनों ही राज-काज के संचालक थे
दुर्गुण, दुर्नीति, दुर्व्यसन ध्वस्त हुए थे
द्रोही-विद्रोही अस्त समस्त हुए थे

सब जनता धर्म्म-प्रधान हुआ करती थी
अपराध, पाप, दुष्कर्मों से डरती थी
सत् धर्म्म-कर्म्म था दण्ड कौन तब भरता
दुष्कर्म नहीं तो न्यायालय क्या करता

अधिकारों का अपहरण नहीं होता था
विधि के विरुद्ध आचरण नहीं होता था
कर्त्तव्य कर्म्म पर ध्यान दिया जाता था
कर्म्मठता का सम्मान किया जाता था

दुष्कर्म्म, पाप, अपराध न करते थे जन
कुत्सित भावों से कभी न भरते थे मन
सब सत्य, न्याय, सद्धर्म्म, प्रेम-पालक थे
धर्म्मज्ञ, धीर ही शासन-संचालक थे

चोरी-जूए का नहीं बोल बाला था
थे सब निश्चिन्त; नहीं ताली-ताला था
जो वस्तु जहाँ थी वहीं पड़ी रहती थी
जनता अपनी को ही अपनी कहती थी

कोई न पाप-पोषण, शोषण करता था
अनुचित साधन से कोष नहीं भरता था
जन-उन्नति से समाज-हित नित होता था
भिन्नत्व मेट, एकत्व निहित होता था

तब देश-द्रोह या राज-द्रोह की माया
फैली न कभी; सब में सद्भाव समाया
विश्वासघात-आघात नहीं होते थे
षड्यन्त्रों के विष-बीज नहीं बोते थे

सहयोग और सहकार प्रथा प्रचलित थी
मन थे विशुद्ध, नीयत न नेक विचलित थी
जिस हाथ किसी से कोई ऋण लाता था
उस हाथ उसी को वापस कर आता था

जन-मत की शासन में सदैव प्रभुता थी
राजा की जनता में समता-ममता थी
जो शासक निज कर्त्तव्य न कर पाता था
वह अपराधी था, दण्ड दिया जाता था

शासक जन-मत को ही महत्त्व देते थे
प्रत्येक विषय में जन-मत ले लेते थे
निष्पक्ष भाव से धर्मतत्त्व का बल था
अध्यात्मवाद ही जनता का संबल था

मूकों, बधिरों, अन्धों को शिक्षा देना
बूढ़े, असमर्थ, अनाथों की सुधि लेना
सब काम राज्य ही सदा किया करता था
कोई न कष्ट सहता: भूखा मरता था

जिनको तज मात-पिता सुरधाम सिधारे
वे शिशु अनाथ थे, जाति-जननि के प्यारे
राजाश्रय से पाले-पोसे जाते थे
शिक्षित हो द्विज नागरिक कहलाते थे

अपराध अल्प संख्यक जन ही करते थे
सब धर्म्म-नीति-नियमों को अनुसरते थे
तब अपराधी अपराध मान लेना था
बदले में न्यायी क्षमा-दान देता था

यह क्षमा-दान ही सब सुधार करता था
अपराधी की अपराध-बुद्धि हरता था
थी क्षमा प्रायश्चित-रूप पाप-संशोधक
शुचिता-संचारक: उच्च भाव उद्बोधक

नैतिक दण्डों से इष्ट-सिद्धि होती थी
अपराध-वृत्ति वह खोज-खोज खोती थी
निर्दोष मनों में दुर्मति क्यों उमगेगी
जब बाँस नहीं; बाँसुरी न कहीं बजेगी

अपराधी, घातक, पापी, स्वेच्छाचारी
थे प्राणदण्ड से मुक्त सभी नर-नारी
उनका 'सुधार-गृह', 'कारागार' नहीं था
शासन का भीषण दण्ड-प्रहार नहीं था

छल-छद्म भाव से शोषण करने वाले
अनुचित साधन से निज घर भरने वाले
ठग, चोर, जार, जड़, घूँस पचाने वाले
पड़ते थे निश-दिन गुप्तचरों के पाले

वंचकता से धन-धान्य कमाता था जो
ठग-ठग कर झूठी धाक जमाता था जो
उसका सब द्रव्य-कोष राजा हरता था
वह रंक-जनों की भाँति पेट भरता था

जनता या लोक-सभाओं से निर्वाचित
प्रतिनिधियों से होते थे जनपद शासित
शासन में सेवा थी आतङ्क नहीं था
कोई भी तब भयभीत सशंक नहीं था

जो न्याय-निष्ठ निर्भय शासन करता था
जो दुखी जनों की पीर-भीर हरता था
यश, क्षेम, समृद्धि, सिद्धि, सुख वह पाता था
प्रिय- पिता, पुत्र-पालक समझा जाता था

वह सदा प्रजा-सेवा में रत रहता था
सबको सुख देता, स्वयम् कष्ट सहता था
संतान समान प्रजा समझी जाती थी
सद्भाव- स्नेह- संरक्षण नित पाती थी

दुष्टों का दलन और शिष्टों का पालन
होता था धर्मयुक्त शासन-संचालन
अन्यायी नृप न राज्य करने पाता था
अपमानित और, पदच्युत हो जाता था

जो राजा न्याय-निधान नहीं होता था
जो विनयी, धर्म्म-प्रधान नहीं होता था
जो शासन में निष्पक्ष नहीं होता था
जो राजनीति में दक्ष नहीं होता था

जो जनता को सन्तुष्ट न कर पाता था
जो भोग-विलासों में ग्रस-फँस जाता था
जो कायर, कुटिल, क्रूर, कुत्सित होता था
कर्त्तव्य-भ्रष्ट बन पाप-पुंज ढोता था

जो पद-मद में उन्मत्त स्वेच्छाचारी
करता था घोर अनिष्ट अधम अपकारी
उसका जन-जनता में न कहीं आदर था
वह कैसा निपुण नरेश निरा खर-वर था

ज्ञानी-गुणियों पर संकट लाने वाला-
त्यागी-तपस्वियों के घर ढाने वाला
राजा विनाश की ओर चला जाता था
हो नष्ट-भ्रष्ट सब राज्य दुःख पाता था

ऐसे भूपति पर प्रजा कोप करती थी
कर पद से च्युत अधिकार सभी हरती थी
वह पतित प्रजेश अधम समझा जाता था
भर्त्सना, घृणा, धिक्कार सदा पाता था

ऋषि-मुनि, विद्वान्, विवेकी जब आते थे
तो राजसभा में उच्चासन पाते थे
साहित्यकार, कवि, कलावन्त, गुरु, ज्ञानी—
थे आदरणीय : स्वतन्त्र लेखनी-वाणी

ज्ञानी-गुरु बन मध्यस्थ न्याय करते थे
निष्पक्ष भाव से प्रेम-प्रीति भरते थे
ऋषि-मुनियों का आदेश मानते थे तब
उसमें ही सब कल्याण जानते थे सब

साहित्यकार जन-जनता के उद्बोधक
थे नैतिकता-निर्णायक पुण्य प्रबोधक
वे जन-जीवन में भव्य भाव भरते थे
निज ज्ञान-भानु से मोह-तिमिर हरते थे

मन्त्री-मण्डल में विज्ञ सचिव शुभकारी
शासन के थे ये ही सच्चे अधिकारी
अपने-अपने विषयों के सब ज्ञाता थे
धर्म्मज्ञ, धीर, वर वीर, लोक-त्राता थे

यदि राज-काज में भूल-भ्रान्ति भरती थी
तो मन्त्रि-मन्त्रणा दूर उसे करती थी
निर्लिप्त और निष्पक्ष मन्त्रि-मण्डल था
सारे समाज-शासन को इसका बल था

यह मण्डल ही सद् परामर्श दाता था
गति-विधि-संचालक रीति-नीति-त्राता था
अनुभवी 'अमात्य' उच्चतम अधिकारी थे
वे वैभागिक अध्यक्ष-कर्म्मकारी थे

'मंत्री'-'अमात्य' गण शासन-संचालक थे
सद्धर्म, न्याय, नय, नीति, प्रीति-पालक थे
सहयोग, स्नेह, सुख से जनता रहती थी
सर्वत्र शान्ति की सुधा-धार बहती थी

राजा-मन्त्री या सचिव विनय-नय मण्डित
थे सच्चरित्र, गुणवान, गुणज्ञ, सुपण्डित
सब से सप्रेम, सविनय सदैव मिलते थे
मिल-जुल कर सबके हृदय-पद्म खिलते थे

दे-देकर भाषण धाक न व्यर्थ जमाते
अनुचित साधन से कभी न कीर्ति कमाते
वे कर्म्मवीरता के दृढ़ अनुरागी थे
थे सचिव किन्तु सच्चे सेवक-त्यागी थे

थे वे प्रबन्ध-पटु, पारंगत, शुचि, न्यायी
जनता के आगे पूरे उत्तरदायी
अपने-अपने विभाग के संचालक थे
सद्भावयुक्त सच्चे सुनीति-पालक थे

पद-मद में हो उन्मत्त न वे बौराते
निज प्रभुता का आतंक न कभी दिखाते
हठवाद, क्रोध, दुर्भाव, दूर रहते थे
अपने को सदा लोक-सेवक कहते थे

दे-दे अभिभाषण भीड़ न व्यर्थ लगाते
अपनी प्रभुता की धाक न नेक जमाते
निज गुण-गरिमा के गीत न गढ़-गढ़ गाते
जो कहते उसको करके भी दिखलाते
जो आशा-रवि की किरणें छिटकाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो दलबन्दी से काम नहीं करते थे
झाँसे-झटके से 'वोट' नहीं हरते थे
जिनको तिकड़म की तान न कभी सुहाती
मन-वचन-कर्म में नहीं भिन्नता भाती
जो छल-प्रपंच का पन्थ न अपनाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो वेतन पर बलिदान नहीं देते थे
जो पद-प्रभुता पर प्राण नहीं देते थे
जो पी घमण्ड का घी न अकड़ जाते थे
जो शान जमाते और न इतराते थे
जो प्रेम-पयोनिधि में निश-दिन न्हाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जिनका जन-जन को द्वार खुला रहता था
पीड़ित आ अपनी कष्ट-कथा कहता था
जो स्नेहसहित दुख दूर किया करते थे
व्याकुल-जन को परितोष दिया करते थे
जो सब पर समता-ममता दरसाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो मित्रों को धन-राशि न दिलवाते थे
कुनबे पर कंचन-कोष न बरसाते थे
जो स्वार्थ-सिद्धि पर मिट न धर्म खोते थे
जो वैर-वृक्ष के बीज नहीं बोते थे
जो न्याय-नीति की शुचिता सरसाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो चोर, जार-ज्वारी का दर्प दबाते
वंचकता का विपमय व्यापार मिटाते
जिनको न आय का अनुचित साधन भाता
जिन पर न दस्युदल पोच प्रभाव जमाता
जो सत्य-अहिंसा-पथ के निर्माता थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो विज्ञ ज्ञान-गुण से आगे बढ़ते थे
बन विनयशील, गौरव-गिरि पर चढ़ते थे
जो त्याग-तपस्या-व्रत के सत् साधक थे
जो सत्य-धर्म-ध्रुवता के आराधक थे
जो जनता में जीवन-द्युति दमकाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जिनने जन-सेवा जीवन-लक्ष्य बनाया
जिनने न भूल-भ्रम से भी पाप कमाया
जिनको न स्वार्थ की गन्ध कभी भाती थी
जिनकी सुकीर्ति दशदिश में छा जाती थी
जो धीर धूर्त्तता को धिक् धतियाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो शुद्ध भावना-अमृत बरसाते थे
जो अशुचि जीवनों में शुचिता लाते थे
जिनके शब्दों में सुधा-धार बहती थी
जिनकी वाणी में विमल ज्योति रहती थी
जो दीन-हीन दुखियों के सुखदाता थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो दुरभिमान-दुर्दम्भ नहीं करते थे
जन-जीवन में सद्भाव सदा भरते थे
जो विषयों में आसक्त नहीं रहते थे
जो जनता के हित घोर कष्ट सहते थे
जो कुटिला कपट-नीति का घर ढाते थे
वे कर्मवीर तब मन्त्री-पद पाते थे

जो दम्भी मन्त्री स्वार्थ-सिद्धि में रत थे
जो विनयहीन, उद्दण्ड, अधम, उद्धत थे
हो पद-मद में उन्मत्त अकड़ जाते थे
वह पद-च्युत होकर उचित दण्ड पाते थे

थीं धर्म-सभा और राज-सभा संस्थापित
वर विद्या-सभा संघटित और सुनिश्चित
ये तीन सभाएँ शासन में साधक थीं
अन्याय-अनीति-मार्ग में नित बाधक थीं

'परिषद्' या 'लोक-समितियाँ' थीं आयोजित
जो शासन को करती रहती थीं नियमित
यदि राज-काज में दोष दृष्टि आता था
तो 'लोक-समिति' द्वारा वह मिट जाता था

जनता द्वारा निर्वाचित जन जो जाते
तो 'पौर' 'जानपद' वे सदस्य कहलाते
यह 'पौर-जानपद' दल स्वराज्य-चालक था
नय, न्याय, नीति युत पुण्य प्रजा-पालक था

कर्त्तव्य कर्म्म करना ध्रुव ध्येय अटल था
सब सत्यनिष्ठ थे, नैतिकता ही बल था
प्रत्येक विषय पर निश्चित मत देते थे
समुचित कार्यों में सब सहमत रहते थे

सब सभ्यों के सुखमय आसन निश्चित थे
कर्त्तव्य और अधिकार नियत-नियमित थे
वे सभाध्यक्ष को सम्बोधन करते थे
निज भाव-प्रकाशन में न कभी डरते थे

प्रतिनिधि गण राज-सभा में जब जाते थे
अनुशासन-प्रियता पूरी दिखलाते थे
अध्यक्ष महोदय से अनुमति लेते थे
तब विनय-सभ्यता से भाषण देते थे

जो 'मतदाता' या 'निर्वाचक' होते थे
वे हो सतर्क कर्त्तव्य-भार ढोते थे
मत-दान उसी जनके निमित्त करते थे
जिसका चारित्र्य-विवेक चित्त धरते थे

जब राष्ट्र-राज्य का संविधान बनता था
तो न्याय-नीति का शुद्ध सार छनता था
तब विद्वानों का मत माँगा जाता था
अज्ञों के मत से पास न हो पाता था

ऋषि-मुनि शासन में योग दिया करते थे
निज अनुभव का उपयोग किया करते थे
अतएव न कोई त्रुटि होने पाती थी
नृप-नीति धर्म्म-ध्रुवता में धँस जाती थी

जब सुधी, सुज्ञ, विद्वान सभा में जाते
तो सत्य, धर्म्म, शुचिता सदैव सरसाते
वे देख अधर्म्म न मौन-मूक रहते थे
जो सत्य, न्याय था, निर्भय हो कहते थे

अति दृढ़ता से विधिवत् विरोध करते थे
सद् संशोधन वे सानुरोध करते थे
इससे शासन की भूल सुधर जाती थी
जनता भी सुख, सन्तोष, धैर्य पाती थी

था मुख्य राज्य-न्यायालय अवधपुरी में
भगवान् राम की दिव्य-भव्य नगरी में
सबके समक्ष नित न्याय किया जाता था
वादी-प्रतिवादी सब सुविधा पाता था

जो न्यायालय सर्वोच्च कहा जाता था
वह बड़े मामलों को ही निबटाता था
सुनता अपील, समुचित निर्णय देता था
कर नित मारालिक न्याय सुयश लेता था

अपराधों की निर्णायक न्याय-सभाएँ
चल-अचल और थीं उच्च न्याय-संस्थाएँ
प्रत्येक प्रान्त में थे प्रधान न्यायालय
सबके ऊपर था राजा, राज-सभामय

सब अधिकारी थे न्याय-निष्ठ निर्णायक
सद्भावशील, सेवक, सन्मित्र, सहायक
उनको न प्रलोभन विचलित कर पाते थे
वे जन-श्रद्धा के भाजन बन जाते थे

वे विनयी, निर्भय, सदय, प्रेम-पूरित थे
निष्पक्ष, न्याय-निधि, अति उदार गति-मति थे
सब से सदैव सादर मिलते-जुलते थे
सबके अभाव-अभियोग सदा सुनते थे

सब दलबन्दी से दूर सदा रहते थे
ऋजु रीति-नीति का पुण्य पन्थ गहते थे
अन्याय, असत्य न उनको कभी सुहाया
सद्भाव, स्नेह, सौजन्य सदा ही भाया

निर्भय, निष्पक्ष, न्याय-नय के नायक थे
वे सज्जन, शिष्टजनों को सुखदायक थे
था दम्भ न उनके पास सत्य जीवन था
शिव संकल्पों से युक्त सभी का मन था

जन-सेवा समझा धर्म्म-कर्म्म जीवन का
निष्काम कर्म्म ही लक्ष्य रहा था उनका
दुखियों के दुःख, कष्ट, विपदा हरते थे
सुख-शान्ति, प्रेम-रस की वर्षा करते थे

अधिकारी सब की कष्ट-कथा सुनते थे
दीनों-दुखियों की मर्म-व्यथा सुनते थे
सबके निमित्त उन्मुक्त द्वार रहता था
कोई न असुविधा-जन्य कष्ट सहता था

ये अधिकारी मन्त्री के अन्तर्गत थे
इस भाँति सहस्रों जन शासन में रत थे
था सुदृढ़ संघटन राज-काज का भारी
कैसे रह पाता कोई अत्याचारी

प्रति ग्राम इकाई-रूप गिना जाता था
मत-गणना से 'गणतन्त्र' जन्म पाता था
राजा का भी जनता चुनाव करती थी
एकाधिपत्य शासन से वह डरती थी

दस ग्रामों पर जो ग्राम प्रमुखता पाता
वह ग्राम 'संग्रहण' की पदवी अपनाता
जिसके अन्तर्गत ग्राम चार सौ रहते
उस महा ग्राम को विज्ञ 'द्रोणमुख' कहते

'संग्रहण', 'द्रोणमुख' सु-स्थानीय कहाते
या जनपद सन्धिनगर वे समझे जाते
इन ग्रामों-नगरों में तब न्यायालय थे
सब न्यायमूर्ति निष्पक्ष, सुयोग्य, सदय थे

जो नगर आठ सौ ग्रामों के ऊपर था
वह सु-'स्थानीय' नाम का मुख्य नगर था
जो दो प्रान्तों के मध्य स्थिति पाता था
वह 'जनपदसन्धि' नगर तब कहलाता था

'ग्रामणी' ग्राम का ऊँचा अधिकारी था
वह नेता, न्यायी, सेवक, हितकारी था
अपराधी नित निष्पक्ष दण्ड पाते थे
शासक, समाज-सेवक समझे जाते थे

नगरों में 'पौर सभा' प्रबन्ध करती थी
वे पौरकर्म्म-पद्धति नित आचरती थीं
'गण', 'गणवल्लभ' थे श्रमिकों के संचालक
'नैगम' 'नैगमवल्लभ' व्यापार-प्रचारक

था पौरसभा का कार्य नगर की रक्षा
निःशुल्क और अनिवार्य नागरिक शिक्षा
स्वच्छता, स्वास्थ्य का सुन्दर सुख-आयोजन
वीथी या राज-पथों का शुचि संरक्षण

'गण' की तुलना में 'गुण' गौरव पाते थे
बहु अज्ञों में सुविज्ञ पूछे जाते थे
था लोकतन्त्र, पर, न्याय-नीति का बल था
तब धर्म्म जीवनाधार, सत्य संबल था

बनती थीं ग्राम-ग्राम में तब पंचायत
ले सुबुधों का सहयोग, लोक का बहुमत
ये पंच न्याय-निधि उलझन सुलझाते थे
निष्पक्ष भाव से सबको अपनाते थे

थे ग्राम-ग्राम और नगर-नगर में रक्षक
जनता के सेवक या सच्चे संरक्षक
फिर कितने ही ग्रामों पर थे अधिकारी
जो करते थे नित न्याय-व्यवस्था सारी

पुर-नगरों में 'शुभचिन्तक' घर-घर जाते
यदि रोगी, दुखी, क्षुधित जन वे पाते
तो दे तुरन्त साहाय्य कष्ट हरते थे
आपत्तिग्रस्त का सादर हित करते थे

'सर्वार्थ-चिन्तकों' का चिन्तन दुखहारी
था सबको श्रेयस्कर, शुभ, मंगलकारी
ये सोच-सोचकर वे विधि बतलाते थे
जिन से जन-जीवन सुखमय बन जाते थे

नगरों की भाँति प्रान्त के भी अधिकारी
थे विज्ञ, कुशल, अनुभवी, सत्य-आचारी
वे शासन नीति-निपुणता से करते थे
कर्त्तव्य-कर्म्म कर सबके दुख हरते थे

नगरों में नगर-सभाएँ निर्वाचित थीं
जिनकी अधिकार परिधि परिमित-सीमित थी
थीं लोक-सभा, संसद्, समितियाँ सुव्यापक
शासन की रीति, प्रतीति, नीति-विज्ञापक

तब राजनीति में सत्य-धर्म्म का बल था
थी कूटनीति से मुक्त, न उसमें छल था
सब कार्य सदा सुस्पष्ट किये जाते थे
लुक-छिप करके धोखे न दिये जाते थे

करते गुण-दोष-विचार अनुग्रह-निग्रह
सम्मान, दान, अभियान, सन्धि या विग्रह
सब दूरदर्शितापूर्ण काम होते थे
अविवेक-जनित विष-बीज नहीं बोते थे

जो धर्म्म-नीति, शासन-गति का ज्ञाता था
संकेतों से सब तथ्य समझ जाता था
जो वाग्मि, प्रभाव-पूर्ण, समुचित-सुन्दर था
वह देश-काल-मर्मज्ञ दूत बुधवर था

जज 'प्राड विवाक' 'समाहर्ता' कहलाते
या प्राज्ञ, प्रदेष्टा गण की पदवी पाते
वे न्यायमूर्ति विद्वान, विज्ञ, पण्डित थे
सब संविधान के कोष, मान-मण्डित थे

थे न्यायाधीश विनीत न्याय-निधि नागर
शासन-विधान-विधि-विज्ञ सर्वगुण सागर
अन्याय किसी पर कभी न हो पाता था
वादी-प्रतिवादी हर्षित हो जाता था

शासन-संरक्षण राज-दण्ड करता था
उद्दण्ड, दण्ड को देख-देख डरता था
जो व्यक्ति सुप्त हो, स्वार्थ-स्वप्न लेता था
उसको शुचि शासन-दण्ड जगा देता था

शासन-सुदण्ड अति दृढ़ता से चलता था
अन्यायी, दुष्ट, दानवों को दलता था
कुलबोर, आततायी न पनप पाते थे
पापी, हत्यारे दृष्टि नहीं आते थे

जो न्यायाधीश न्याय अनुचित करता था
वह राज-सभा से उग्र दण्ड भरता था
अभियुक्तों से व्यवहार सदय होता था
सच कहने में संकोच न भय होता था

यदि न्यायाधीश पक्ष में पड़ जाता था
तो अघी, अधम का जीवन मड़ जाता था
चलता अभियोग, दण्ड दश गुण पाता था
फिर कभी न जनता के आगे आता था

तब न्यायालय में न्याय नहीं बिकता था
क्षण-भर को भी अन्याय नहीं टिकता था
न्यायाधीशों से दोष न छिप पाता था
'निर्णय' में धन का कोप न खिप जाता था

राजा, मन्त्री, अमात्य, सेवक, अधिकारी
पण्डित, विद्वान, गुणी, ज्ञानी नर-नारी
निज अपराधों का दण्ड अधिक पाते थे
वे कई गुणे दोषी समझे जाते थे

तब पक्षपात-पशु की न नेक चलती थी
रिश्वत-रमणी की दाल नहीं गलती थी
सुन्दरी सुफ़ारिश काम न कुछ आती थी
ख़ातून ख़ुशामद रो-रो मर जाती थी

दोषी-अपराधी उचित दण्ड पाता था
जनता में घृणा-पात्र समझा जाता था
तब राज-दण्ड या लोक-दण्ड के कारण
होता था अपराधों का सहज निवारण

जो मिथ्याभाषी पक्ष पराजित होता
वह उभय पक्ष व्यय-भार स्वम् ही ढोता
फिर उसपर भी अभियोग चलाया जाता
मिथ्या भाषण का स्वाद चखाया जाता

अपराधी शीघ्र शुद्ध निर्णय पाता था
निर्णय पर पुनर्विचार किया जाता था
सब न्याय-व्यवस्था लिखी-पढ़ी जाती थी
छोटी-से-छोटी बात न छुट पाती थी

निष्पक्ष साक्षिजन सदा सत्य कहते थे
ले पक्ष इधर या उधर नहीं वहते थे
अभिभाषक या वकील का नाम नहीं था
उत्कोच, सिफारिश का कुछ काम नहीं था

साक्षी जन समुचित शुल्क सदा पाते थे
वे 'स्वामि-वाक्य' पाकर अवश्य आते थे
लेते थे शपथ—"पतित-पापी कहलाऊँ—
"यदि एक शब्द भी झूठ बोलने पाऊँ'

"यज्ञों-दानों के पुण्य न फलने पावें,
"सब पूर्व जन्म के सुकृत नष्ट हो जावें,
"घर-घर भटकूँ मैं भीख माँग कर खाऊँ,
"यदि झूठ कहूँ तो घोर घृणित कहलाऊँ।"

जो न्यायालय में झूठ कथन करता था
वह मिथ्याभाषी राज-दण्ड भरता था
अतएव साक्षिजन सत्य कथन करते थे
वे पक्षपात की नीति न अनुसरते थे

थे न्यायालय चल-अचल न्याय-निर्धारक
जनता-हितकारक : सत्य-सुनीति-प्रचारक
वादी-प्रतिवादी सब सुविधा पाते थे
अभियोग सरलता से तय हो जाते थे

पर्यटन देश का शासक-जन करते थे
सुनते थे सबकी बात, कष्ट हरते थे
फैली थी चहुँ दिश गुप्तचरों की माया
छिपता था जिससे कभी न पाप छिपाया

कर भ्रमण कष्ट जनता के हरते थे वे
सबका हित हो ऐसी विधि करते थे वे
इस भाँति सदा सन्तुष्ट सभी रहते थे
वे कभी स्वप्न में भी न दुःख सहते थे

शासन से लोग न शङ्कित-आतङ्कित थे
सुस्तूपों पर आदर्श वाक्य अङ्कित थे
जो सबको सावधान करते रहते थे
कर्तव्यभाव मन में भरते रहते थे

पुर, नगर, मार्ग-रक्षक थे 'दण्डायुधधर'
कर्मण्य, वीर, विनयी, अनुभवी, प्रखरतर
निर्भय, निश्शंक विचरते-चरते थे तब
सानन्द सफल हो उद्यम करते थे सब

जो निर्भय, बुद्धिमान, सन्मार्ग-प्रदर्शक
जिसका व्यक्तित्व, चरित्र, अमल, आकर्षक
जो जन-सेवा में ही सब कुछ पाता था
वह राम-राज्य में नेता कहलाता था

जो शत्रु-पराभव में समर्थ होता था
जो देश-द्रोह को खोज-खोज खोता था
जो वीर दुर्गुणों का दृढ़ गढ़ ढाता था
वह जन-नायक या नेता कहलाता था

जो त्याग-तपस्या में नित रत रहता था
जो धर्म्म-कर्म्म ही से सहमत रहता था
जिसको प्रपंच-आडम्बर कभी न भाता
वह रामराज्य में नेता निपुण कहाता

जो ज वन में नैराश्य-भाव भरता था
जो जनता को उत्साह-हीन करता था
जो कपट-मार्ग को सत्-पथ बतलाता था
वह अपराधी तब घोर दण्ड पाता था

जन-जन का जन्म-मरण अङ्कित होता था
सब माप-तोल विधिवत निश्चित होता था
मुद्रा की समुचित सरल प्रथा प्रचलित थी
तब राज-करों की विधि नियमित–परिमित थी

सन्देश कपोतों द्वारा भेजे जाते
वे समाचार सब लाते थे—ले जाते
ऐसे कपोत अति पटु शिक्षित होते थे
'वार्ताहर' बन चिट्ठी-पत्री ढोते थे

भावों का निर्णय राज्य किया करता था
कम नाप-तोल कोई न पेट भरता था
थे हाट, बाट, बाज़ार, शिल्प, व्यापारी
सब लोग न्याय-संलग्न सत्य-आचारी

सब तोल-नाप के अति समुचित साधन थे
कम तोल-नाप कर कभी न हरते धन थे
सब बाट-नाप निरखे-परखे जाते थे
विक्रेता कभी अनर्थ न कर पाते थे

शासन जितनी दर निश्चित कर देता था
उससे न अधिक कोई कुसीद लेता था
इस विधि ऋण, जीवन-भार नहीं होता था
पूँजी का मल्ल मल्हार नहीं होता था

निश्चित होते थे मूल्य राज्य के द्वारा
चलता था नित वाणिज्य इसी विधि सारा
विक्रेता लोग न अधिक मूल्य लेते थे
अभिलषित वस्तु तत्काल गहा देते थे

थे मादक-मांस निषिद्ध, न विक पाते थे
रहते थे दूर न नगरों में आते थे
चाण्डाल, वधक जो जन पीते-खाते थे
वे अति निकृष्ट निन्दित समझे जाते थे

दक्षिणा-दान वेतन निश्चित पाते थे
वे नियत समय पर सबको मिल जाते थे
मासिक, वार्षिक वृत्तियाँ दान देते थे
जिनको अधिकारी ही सदैव लेते थे

सेवक असमर्थ—वृद्ध जब हो जाते थे
तब 'कार्य-निवृत्त' वृत्ति वे अपनाते थे
जो धन उनको इस भांति दिया जाता था
वह 'राज-वृत्ति' या 'पेन्शन' कहलाता था

सेवक-भृत्यों पर स्नेह-भाव दरसाते
सब समझ सहायक सदा उन्हें अपनाते
कोई उनसे अनुचित न काम लेता था
वेतन या पारिश्रमिक उचित देता था

अति उचित आय से राज-काज चलता था
कर-भार प्रजा को नेक नहीं खलता था
नृप-कोष प्रजा-हित ही अर्पित होता था
थे सब समृद्ध : कोई न कष्ट सहता था

कृषकों को भू-कर भार नहीं होता था
श्रमिकों पर अर्थ-प्रहार नहीं होता था
ठग-विग्रह का व्यापार नहीं होता था
वंचकता का अधिकार नहीं होता था

जिस भांति भ्रमर पुष्पों से रस लेता है
कर नष्ट-भ्रष्ट वह कष्ट नहीं देता है
उस भांति प्रजेश प्रजा से कर पाते थे
रक्षित, शिक्षित, दीक्षित कर अपनाते थे

जिसके जीने से अन्य लोग जीते हैं
हो तृप्त सदा सुख से खाते-पीते हैं
जिसकी वाणी अमृत-रस बरसाती है
जिसकी सुकीर्ति जगती पर छा जाती है

जिसका जीवन था वंश-समुन्नतिकारी
जो देश-जाति सेवक, विनीत हितकारी
उसका जीवन ही जीवन कहलाता था
ऐसा मनुष्य ही तब गौरव पाता था

सद्धर्म-धाम, विज्ञान-ज्ञान, पारंगत
आचारवान, कर्मठ, सदैव परहित रत
ऐसे जन का सर्वत्र मान होता था
जनता में निश-दिन यशोगान होता था

तब युद्धों का बरबस विधान होता था
सर्वत्र शान्तिमय समाधान होता था
था स्वार्थ नहीं; सिद्धान्त युद्ध का कारण
अतएव हुआ करता था युद्ध-निवारण

युद्धों से सच्ची शान्ति न हो पाती थी
खड्गों की विजय अचिर समझी जाती थी
क्या कभी अशान्ति शान्ति की उत्पादक है
समता, शुचि नीति शान्ति की प्रतिपादक है

युवकों को सैनिक-शिक्षा दी जाती थी
जो अड़े समय पर बड़े काम आती थी
सैनिक-सेनापति युद्धों में भिड़ते थे
सिद्धान्त हेतु ही जो प्राय: छिड़ते थे

सैनिक-शिक्षा के लिये खुले शिक्षालय
व्यवहार, ज्ञान, विज्ञान, विश्व-विद्यालय
सब नवयुवकों के लिये श्रेय-साधन थे
सर्वदा पुष्ट करते रहते तन-मन थे

जो शूरवीर धर्म्मज्ञ धैर्यधारी था
जो अस्त्र-शस्त्र-संचालक अधिकारी था
जो शासन-पटु नय-न्याय-निष्ट ज्ञानी था
वह रामराज्य-सेना का सेनानी था

सैनिक शिक्षण वर-वीर व्रती पाते थे
अवसर आने पर रण में अड़ जाते थे
अत्याचारी अरि का विनाश करते थे
निज बल, विक्रम, पौरुष-प्रकाश करते थे

सैनिक का धर्म्म देश-हित पर मिटना था
सुख-शान्ति, सत्य-हित रण में जा जुटना था
अत्याचारों का पाप-पुंज दहता था
संकीर्ण भावना से विमुक्त रहता था

सैनिक संरक्षण में निमग्न रहते थे
वे सबल शत्रु का दर्प-दम्भ दहते थे
शिष्टों का पालन : दुष्टों का विध्वंसन
था इसी निमित्त क्षत्रियों का सब जीवन

यदि कभी कहीं अधिकार-प्रश्न उठता था
या कभी वैर-विष का अंकुर उगता था
तो न्याय-निष्ठ नेता निर्णय करते थे
मालिन्य मेट, सद्भाव-सुधा भरते थे

सिद्धान्त हेतु ही युद्ध किये जाते थे
जन-रक्षा-हित विष-घूँट पिये जाते थे
तब स्वार्थ-सिद्धि के लिये कौन लड़ता था
कोई न कभी झूठी अड़ पर अड़ता था

रण रुपता था तो न्याय-युद्ध होता था
रण-मत्त न सैनिक बल-विवेक खोता था
करती थी युद्ध-समिति सेना-संचालन
थी चतुरंगिणी प्रचण्ड चमू अरि-घालन

'नागरक' नगर का था प्रधान अधिकारी
शासक, सेवक, जन-जनता का हितकारी
क्षत्रिय वीरों की चमू चमचमाती थी
सिद्धान्त हेतु संग्रामों में जाती थी

थे रथी, अतिरथी, महारथी, सेनानी
रण-कुशल, सत्य-सम्पन्न, धर्म-अभिमानी
थे सैनिक गण निज सेनापति के अनुगत
सब साम, दाम और दण्ड-भेद पारंगत

वे दान, मान, वेतन-प्रसाद पाते थे
सिद्धान्त-हेतु 'रण' में आ अड़ जाते थे
सेनाएँ पैदल, रथ, गज-अश्वारोही
थीं कुशल, सबल, सज्जित, अनीति-विद्रोही

अरिदल का दर्प-दलन करती रहती थीं
दुष्टों में भीरु-भाव भरती रहती थीं
आगे-आगे पथ सुन्दर-सुगम बनाता
समरोचित सज्जा का जो साज सजाता

सैना को पुष्कल भोजन-वस्त्र जुटाता
वह 'परिष्कार-पूरक विभाग' कहलाता
सब अस्त्र-शस्त्र अरि-दल-बल संहारक थे
वे अग्नि प्रवर्षक, प्रलयङ्कर मारक थे

विष-वायु बहाकर मूर्च्छित कर देते थे
वर्षा बरसा कर गति-मति हर लेते थे
नाराच, परशु, धनु, वाण, वज्र घातक थे
ऋपि, गदा, चक्र, असि, शंकु परिघ, पातक थे

थे शूल, त्रिशूल, मुशल, मुद्गर, पट्टिश तब
तोमर, नारायण, शक्ति, पाश, कुण्टा सब
'नालिका', 'शतघ्नी', भीम 'भुशुण्डी' मारक
आग्नेय अस्त्र थे प्रबल-शत्रु संहारक

तब 'अग्नि-चूर्ण' बन तीव्र-तीक्ष्ण, गढ़ ढाते
रण में वे प्रलयङ्कर-प्रचण्ड बन जाते
तूफ़ान कभी आते, बिजली गिरती थी
क्षण-क्षण में भीषण शत्रु-सैन्य मरती थी

आग्नेय, वायु, पर्जन्य अस्त्र चलते थे
सर्पास्त्र, गरुड़, ब्रह्मास्त्र शत्रु दलते थे
विष-वायु और विष-बाण चलाते थे तब
सारे प्रयोग निष्फल हो जाते थे जब

तब भांति-भांति के व्यूह रचे जाते थे
जिनमें पड़ बैरी मुक्ति नहीं पाते थे
धर्मज्ञ, धीर, अनुभवी, सबल सैनिक थे
रणकुशल, वीरता में वे अधिकाधिक थे

आसन-दृढ़ता, सुस्थिरता को अपनाना
कर द्वैधभाव असली उद्देश्य छिपाना
संश्रय, सहायता सबल भूप से पाना
यह राजनीति का मर्म सभी ने जाना

मित्रों से सन्धि, शत्रु से विग्रह करते
प्रतिकूल परिस्थिति में वे धीरज धरते
अनुकूल समय पर कर अभियान-चढ़ाई
विजयी वीरों ने सदा सुकीर्ति कमाई

रोगी, घायल, विक्षिप्त, भीरु, गुरु, ज्ञानी,
पण्डित, संन्यासी, महिला, याचक, दानी
शिशु, वृद्धों पर न प्रहार किया जाता था
शरणागत वैरी, दूत अभय पाता था

कामार्त्त क्लान्त, शस्त्रास्त्ररहित जो होता
कापुरुष, हीन, मदमत्त पड़ा जो सोता
इन पर प्रहार करना सदैव वर्जित था
सर्वत्र न्याय, समता का युद्ध विहित था

यदि शत्रु त्यक्त भयभीत शरण आता था
तो सदा स्नेह से संरक्षण पाता था
मद, मोह, लोभ-वश वह न बिसारा जाता
शासन, समाज सर्वत्र स्वधर्म्म निभाता

जो भीरु युद्ध को छोड़ भाग जाता था
या वैर-विरोध विसार शरण आता था
या अन्य भांति कायरता दिखलाता था
वह 'रामराज्य' में अभय दान पाता था

लड़ते-लड़ते जब शत्रु श्रान्त हो जाता
तो करने को विश्राम सु-अवसर पाता
नव-जीवन, नव-उत्साह सहित फिर लड़ता
उस धर्म्म-युद्ध का पुनः मोरचा अड़ता

'नादेय' 'पार्वत' 'वन्य' और कृत्रिम गढ़
थे एक-दूसरे से बढ़-चढ़ कर अति दृढ़
'कूटागारों' से युक्त राजधानी थी
सब भांति सुरक्षित, सुखद, सुदृढ़ जानी थी

'पुर' 'व्रज' थे दुर्ग सुदृढ़ सम्पन्न सुरक्षित
रहती थी बहु सैनिक सामग्री संचित
अवसर आने पर सेना अड़ जाती थी
पापी अरिदल के पीछे पड़ जाती थी

था 'मित्र' 'भृत्य'-बल मौल आटवी-बल था
'द्विष-बल' भी था—वह किन्तु निपट निश्छल था
सब मिल अत्याचारी पर पिल पड़ते थे
वे सत्य-धर्म्म-रक्षा-हित ही लड़ते थे

अरिदल में से जो भीरु भाग आते थे
वे 'द्विप'-दल के सैनिक समझे जाते थे
घर के भेदी बन वे लंका ढाते थे
ऐसे कायर आदर न कहीं पाते थे

मित्रों के सैनिक 'मित्र-शक्ति' कहलाते
थे 'भृत्य' वही जो निश्चित वेतन पाते
तब 'मौल' वंशगत सैनिक समझे जाते
'आटवी' वन्य वर्गों से बन कर आते

विजयी नृप न्याय-व्यवस्था कर देता था
आतङ्कित हृदयों में शम भर देता था
फिर विजित वंश ही शासक-पद पाता था
कर धर्म्म-राज्य सबको सुख पहुँचाता था

आवास, अन्न, पट, प्रेम सभी पाते थे
विज्ञान-ज्ञान, शिक्षा-विधि अपनाते थे
परिचर्या और चिकित्सा की जाती थी
रंकों को भी सुख-सुविधा दी जाती थी

ऋण-भार-भुजंग न निधनों को डसता था
भाड़ा-भक्षण का भूत नहीं भखता था
तब व्याज-व्याधि का कोप नहीं होता था
वणिकों को अनुचित लोभ नहीं होता था

मठ, मन्दिर, कूए, घाट, धर्म्मशालाएँ
विद्यालय, आश्रम, सेतु, पुण्य-संस्थाएँ
थीं बनी विविध, पुर, ग्रामों में उपकारी
निःशुल्क, सुलभ, सबको सदैव सुखकारी

अति शुद्ध, स्वच्छ, मीठा जल जन पाते थे
कपड़े, बरतन धोते, पीते, न्हाते थे
छिड़काव नगर में नित्य हुआ करता था
दबती थी धूल, न मल-कूड़ा सड़ता था

वर्षा का वेग न ग्रामों को खलता था
पानी न जमा होता, बहता-चलता था
सर, भील, जलाशय, कूप भरे रहते थे
जल का न कष्ट ग्रामीण लोग सहते थे

पुर, नगर ग्राम में मार्ग प्रशस्त बने थे
छाया को जिन पर छाये वृक्ष घने थे
पशु, पथिक, यान निर्भय होकर चलते थे
आतप से होकर तप्त न तन जलते थे

मग-सड़कों का सम्मान किया जाता था
पथ की शुचिता पर ध्यान दिया जाता था
कूड़ा-कचरा छिलके न पड़े पाते थे
सब मार्ग स्वच्छ-सुन्दर ही दिखलाते थे

पैदल पथिकों के मार्ग पृथक निश्चित थे
'दण्डायुधधर'- रक्षक सर्वत्र नियत थे
सुख-सुविधा से सब जन चलते-फिरते थे
भीड़ों में पिचते थे न, कभी गिरते थे

नगरों में बने जन्तु-आलय सुन्दर थे
पशु-पक्षी, जीव-जन्तु जिनके भीतर थे
इनसे दर्शक की ज्ञान-वृद्धि होती थी
बहु विध शिक्षा की कार्य-सिद्धि होती थी

मन-रंजन के हित विविध विचित्रालय थे
विज्ञान-ज्ञान, के लिये पुस्तकालय थे
चित्रालय चित्रों से शिक्षा देते थे
वे दर्शक का मन मोहित कर लेते थे

नर-भक्षक पशुओं का शिकार होता था
कौतुक-वश तब न कहीं प्रहार होता था
पशु प्रचुर सम्पदा दे कृतार्थ करते थे
चर-भूमि सुरक्षित थी; स्वतन्त्र चरते थे

देती थीं, दूध, दही, घृत, माखन गाएँ
घर-घर में बनी हुई थीं गोशालाएँ
थे राम-राज्य में वन था वृक्ष सुरक्षित
उन्मूलन, छेदन, वेधन था अति परिमित

वृक्षारोपण सांस्कृतिक कृत्य माना था
उपकारी जीवन वृक्षों का जाना था
वन-वैभव का गौरव-महत्त्व भारी था
वह विविध भांति जीवों को उपकारी था

ऋषि-मुनि वन में धारणा-ध्यान धरते थे
दे ज्ञान विश्व-कल्याण सदा करते थे
वन जीव-जन्तुओं के थे वास-बसेरे
खाते-पीते; सुख-साधन थे बहुतेरे

वृक्षों की रक्षा पुण्य जान करते थे
तरु-वृक्ष काटने से सदैव डरते थे
फल-फूलों से वन-वृक्ष लदे रहते थे
पट-अन्न आदि का कष्ट न जन सहते थे

वृक्षावलि सन्तति सम समझी जाती थी
यह परम्परागत थाती कहलाती थी
जो निर्दय, वृक्षों की हत्या करता था
वह अपराधी था, राजदण्ड भरता था

शिक्षा-संस्कृति

नियमित आचार-विचार धर्म्म-पालन था
थे जीवन त्याग-प्रधान, तपस्या धन था
शिक्षा तन, मन, आत्मा की उन्नायक थी
मानवता का आधार : ज्ञानदायक थी

तन पुष्ट और मन शुद्ध-पवित्र बनाना
आत्मा में भक्ति-शक्ति की ज्योति जगाना
सद शिक्षा का आदर्श यही माना था
मानवता का उत्कर्ष यही जाना था

जो जीवन में सद्भाव सदा भरती थी
जो ज्ञान-दान दे शुद्ध-बुद्ध करती थी
जो मुक्ति-धाम का द्वार दिखा देती थी
जो प्राणिमात्र से प्रेम सिखा देती थी

जिस में कटुता का लेश नहीं रहता था
अनुदार भाव का शेष नहीं रहता था
वह सद् शिक्षा कल्याण-कर्म्म-साधक थी
निष्काम कर्म्म-प्रेरक, प्रभु-आराधक थी

जीवन से शिक्षा भिन्न न हो पाती थी
वह जीवन में पवित्रता उमगाती थी
जो शिक्षा से जीवन को बिलगाता था
वह साक्षर था; शिक्षित न कहा जाता था

विद्यालय थे आदर्श, सत्वगुण-साधक
आचार्य, तपस्वी, व्रती, सत्य-आराधक
इन संस्थाओं में शिक्षा जो पाते थे
वे देश-जाति के सेवक बन जाते थे

गुरुकुल-जीवन समता का संचारक था
विग्रयुक्त विषमता विधि का संहारक था
तब त्याग-तपस्यापूर्ण सुलभ शिक्षण था
'मानवता का निर्माण' पुण्य-मय प्रण था

शिशु शिक्षा गर्भ-काल ही में पाता था
हो शुद्ध-बुद्ध वह धरणी पर आता था
संस्कृति की ज्योति अनन्त सत्य-बल अक्षय
थी मात-पिता की गोद विश्व-विद्यालय

यों तो शिक्षक, शिक्षालय थे घर-घर में
थे किन्तु 'विश्व-विद्यालय' भारत-भर में
सारा संसार यहीं शिक्षा पाता था
हो शिक्षित भारत का गौरव गाता था

अनिवार्य्य और निःशुल्क राष्ट्र-शिक्षा थी
सब थे तितिक्षु व्यवसाय न तब भिक्षा थी
थे हृष्ट-पुष्ट आदर्श वीर नर-नारी
आचारवान, कर्मठ, विवेक-बल धारी

प्रत्येक ग्राम में विद्यालय होता था
शिक्षा दे वह अज्ञान-तिमिर खोता था
सब जनता के सुख-दुख अनुभव करते थे
शुचिता, समता, सद्भाव, स्नेह भरते थे

पुत्री-पुत्रों के गुरुकुल पृथक्-पृथक् थे
जिनमें कर्मठ आचार्य सुधीन्द्र सजग थे
दोनों संस्थाओं की सीमा निश्चित थी
दूषित सहशिक्षण की न प्रथा प्रचलित थी

प्रारम्भिक शिक्षा शिशु ग्रामों में पाते
फिर गुरुकुलादि में वे प्रविष्ट हो जाते
अपराध निरक्षरता को तब माना था
विद्या-विलास ही जीवन-व्रत जाना था

जब आठ वर्ष का बालक हो जाता था
उपनयन धार सीधा गुरुकुल जाता था
राजा या रंक-कुमार साथ पढ़ते थे
पढ़-पढ़ कर वे गौरव-गिरि पर चढ़ते थे

बालक निज कुल से गुरुकुल में जाते थे
तो माता-पिता स्नेह से समझाते थे
देकर उत्तम उपदेश विदा करते थे
कोमल हृदयों में उच्च भाव भरते थे

ब्रह्मचारी भिक्षा स्वयम् माँग लाते थे
बहुधा वे कन्द-मूल-फल ही खाते थे
गुरुजन भी भिक्षा पर निर्भर रहते थे
शिष्यों के हित वे विविध कष्ट सहते थे

तन पर केवल दो वस्त्र दृष्टि आते थे
जो 'उत्तरीय' या 'अधर' कहे जाते थे
कटि के ऊपर तो 'उत्तरीय' ढकता था
नीचे का अंग 'अधर' पट में छिपता था

अति सूत्र रूप से ज्ञान दिया जाता था
फिर विविध भाँति विस्तार किया जाता था
भाषा साधन थी, साध्य शुद्ध शिक्षा थी
उद्देश्य तितिक्षा, सदाचार-रक्षा थी

शिक्षा के सारे अंग पढ़ाये जाते
साहित्य, कला, संगीत सिखाये जाते
सहृदयता, शुचिता का विकास होता था
सद् ज्ञान ज्योति का प्रिय प्रकाश होता था

शिक्षा, व्याकरण, निरुक्त, छन्द पढ़ते थे
षट् ज्योतिष, कल्प, ज्ञान-गिरि पर चढ़ते थे
गन्धर्व शास्त्र, रण-धनुर्वेद प्रचलित था
तब शिल्प, चिकित्सा-ज्ञान, नित्य नियमित था

गुरु रेखा, अंक, बीज, ज्यामिति सिखलाते
दर्शन, इतिहास, अर्थ, विज्ञान बताते
भूगोल, छन्द, संगीत, वेद पढ़ते थे
हो पारंगत उन्नति-पथ पर बढ़ते थे

व्यापार, वनिज, कृषि, उद्यम सिखलाते थे
व्यवहार-ज्ञान की बातें बतलाते थे
नैतिक शिक्षा ने सदाचार अपनाया
नागरिक शास्त्र का सुन्दर पाठ पढ़ाया

भूगोल-खगोल-विज्ञ, विज्ञान-विधाता
ग्रह-नक्षत्रों की गति-गरिमा के ज्ञाता
जग को गुरुत्व-आकर्षण तत्व बताया
ज्योतिष का गूढ़ मर्म्म सबको समझाया

योग्यता न अंकों से आँकी जाती थी
कुछ घंटों में ही जाँच न हो पाती थी
केवल 'रटन्त' शिक्षा-आदर्श नहीं था
निष्क्रिय विवेक जीवन-उत्कर्ष नहीं था

ब्रह्मचारी विद्या-पाठ किया करते थे
सद्‌गृही लोक में धर्म्म-कर्म्म धरते थे
वानप्रस्थी उपदेशक-अध्यापक थे
संन्यासी-सन्मति, संस्कृति-संस्थापक थे

अध्यापक त्याग, तपस्या वर व्रत धारी
आचारवान, अनुभवी, मुक्ति-अधिकारी
उनमें न शेष भौतिक माया-ममता थी
सब शिष्यों के प्रति सहज स्नेह-समता थी

वेदांग, वेद, इतिहास, कला, पारंगत
थे विविध शास्त्र, साहित्य काव्य में संरत
वे राजनीति या अर्थशास्त्र के ज्ञाता
थे विज्ञ मानसिक यज्ञों के उद्गाता

इन पर न शासकों का प्रभाव पड़ता था
धन-सत्ता का अंकुश न कभी गड़ता था
ये विश्व-हितैषी विज्ञ, विवेक-विहारी
थे पूजनीय सबके सादर अधिकारी

ये प्राणि मात्र के मित्र, सखा, हित-कारी
थे प्रभु के भक्त अनन्य, धन्य, अधिकारी
निश-दिन सबका कल्याण किया करते थे
सबको विवेक, बल, दान दिया करते थे

तज भेद-भाव समता से शिक्षा देते
अधिकारी शिष्यों को सहर्ष चुन लेते
कोई न मनुष्य अशिक्षित रह पाता था
अज्ञान-जन्य उपताप न सह पाता था

गुरुओं की शिष्य पितावत् पूजा करते
शिष्यों को गुरु प्रिय पुत्र मान मन धरते
यों गुरु-शिष्यों की थी परम्परा पावन
दोनों का था सर्वस्व विमल विद्या-धन

वर ब्रह्मचर्य व्रत धार सुकीर्ति कमाते
वय, बुद्धि, वीर्य्य, बल, वैभव, सम्पति पाते
तेजस्वी, सात्विक, पुण्यशील कहलाते
सद्गुण-गण से सच्चे सुशिष्य बन जाते

गुरुकुल-संचालन गुरुजन ही करते थे
सब शिष्य सदा गुरु-पद्धति अनुसरते थे
संयोजक, समिति, प्रबन्धक-वर्ग नहीं था
पद-लिप्सा, पद-प्रभुता का दर्प नहीं था

विद्या-मन्दिर न राजगद्दी बन पाते
वे ज्ञान-पीठ विज्ञान-भानु दमकाते
जिससे जनहित होता, प्रकाश मिलता था
सारे समाज का हृदय-पद्म खिलता था

शिक्षण-समाप्ति की नियत अवधि आती थी
तो शिष्यों को उपाधि भी दी जाती थी
गुरु ही शिक्षा, दीक्षा उपाधि देते थे
सब शिष्य दक्षिणा में सद् व्रत लेते थे

विद्या-अर्जन कर कुल से जब जाता था
प्रत्येक स्नातक पण्डित कहलाता था
आचार्य्य उसे अन्तिम आशिष देता था
बदले में अति उपयुक्त वचन लेता था

कुछ आदेशों का सार दिया जाता है
गुरु-गरिमा का संकेत किया जाता है
यह शिक्षण ही कल्याण-त्राण-दाता था
सारा समाज इस विधि को अपनाता था

गुरु कहते—गुरुओं के गुण धारण करना
अवगुण उनके तुम कभी नहीं अनुसरना
संयत जीवन हो, विषय-विलास विसारो
मन, वचन, कर्म्म में सत्य भाव संचारो

जो ज्ञान जहाँ से मिले ग्रहण कर लेना
निज ज्ञान अन्य अधिकारी जनको देना
लेने-देने की यह परम्परा पावन
नैतिकता, ज्ञान, ध्यान ही है, अक्षय धन

तुम देश, जाति, मानवता का हित करना
सद्धर्म्म-कर्म्म रक्षाहित जीना-मरना
तुम प्राणिमात्र पर प्रेम-भाव दरसाना
दीनों-हीनों पर करुणामृत बरसाना

दुर्व्यसन, दम्भ, दुर्नीति दुष्ट-दल दलना
तुम स्वयम् सत्य पथ पर सतर्क हो चलना
मानव रहकर मानव-संदेश सुनाना
मानवता तज दानव न कहीं बन जाना

जो सत्य-भक्त शिव-सुधा-धार पीता है
वह मानव ही सुन्दर जीवन जीता है
जिसने जीवन की कलित कला जानी है
वह कलाकार, कवि, पण्डित है, ज्ञानी है

जो मन की शक्ति ज्ञान धारण करती है
जीवन में संयम स्नेह-सुधा भरती है
वह मेधा बहुत उदार बना देती है
मानवता में शुचि मृदुता ला देती है

श्रद्धा ही शुभ कर्मों को सफल बनाती
वह बल-विवेक में क्षमता-ममता लाती
श्रद्धा से जीवन ऊँचे उठ जाते हैं
सब धर्म्म-कर्म्म की गरिमा अपनाते हैं

जिसके जीवन में दुख-संघर्ष न आया
जिसने जीवन में दुर्गति-दुर्ग न ढाया
वह क्या जाने, क्या विजय-सफलता-सुख है
उसको तो दुख ही सुख है, सुख ही दुख है

निर्बल जन कर्म्मवीर कब बन सकते हैं
पर, सबल न पर-हित-साधन में थकते हैं
जो सद्विचार करणी में परिणत करता
है वही विज्ञ, बलवान, वीर, दुख हरता

है धर्म्म वही जो स्नेह-सुधा बरसाता
दुखियों का जीवन सुखमय सदा बनाता
सर्वत्र स्वच्छता-शुचिता-ज्योति जगाता
मालिन्य मेट एकत्व-प्रेम दरसाता

आचार-विचार विशुद्ध भावनामय हो
कर्त्तव्य कर्म्म में कभी न कुछ भी भय हो
मन शिव संकल्प युक्त हो तन अविकारी
आत्मा हो परम पवित्र धर्म्म ध्रुवधारी

तज स्वार्थ-कामनाएँ संयम से रहना
संकट को सदा मुदित मन होकर सहना
परलोक-लोक-हित-साधन में मन देना
है धर्म्म यही, इसका ही वर व्रत लेना

'यम'—सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य-व्रत-पालन
अपरिग्रह, चौर कर्म्म का निपट निवारण
है 'नियम'—शौच, सन्तोष, त्याग, तप करना
सत् स्वाध्याय, प्रभु-भक्ति हृदय में भरना

यम—नियम रहें मानवता के निर्मायक
नैतिकता के उत्पादक, सबल सहायक
इन दोनों पर ही है समाज सब निर्भर
यह लोक बनेगा, शान्ति, शक्ति, सुख का घर

जिससे मानवता का विकास होता है
शुचि, शान्ति, स्नेह, सुख का प्रकाश होता है
वह अटल अहिंसा तत्त्व कहा जाता है
जन-जीवन में कल्याण वही लाता है

जिसने हिंसा को विजयाधार बनाया
वह विजयी होकर भी न विजय-श्री लाया
जब हिंसा से प्रति-हिंसा लड़ जाती है
तब विजय-दुर्ग की नींव उखड़ जाती है

रण रोप-रोप संहार न होने पावें
मानव दानव बनकर न आग बरसावें
सर्वत्र शान्ति सुखदा की लगन लगाना
जन-मन में बन्धु-भाव की ज्योति जगाना

रण-युद्धों की घातक घनघोर घटाएँ
बन विश्व-विनाशक क्यों विष-वारि बहाएँ
सर्वत्र स्नेह-समता की ज्योति जगी हो
मानव को मानव-हित की लगन लगी हो

युद्धों में जो धन नष्ट किया जाता है
वह हिंसा, घृणा, द्वेष, भय उपजाता है
उससे नंगे-भूखे सुख पा सकते हैं
लाखों दुखियों के प्राण बचा सकते हैं

क्या स्वार्थ-युद्ध हैं शान्ति-कान्ति के दाता
अन्याय-निवर्तक प्रीति-नीति-निर्माता
इन युद्धों से तो घोर घृणा बढ़ती है
कटुता की कड़वी बेल नीम चढ़ती है

अध्यात्मशुद्धि से प्रेम उदय होता है
शुचिता-ऋजुता का भाव, भ्रान्ति खोता है
समता-ममता-मधु प्राणिमात्र पीता है
वसुधा को निज परिवार जान जीता है

जिस भाँति सिन्धु में बिन्दु समा जाता है
जिस भाँति बिन्दु में सिन्धु दृष्टि आता है
उस भाँति सभी मिल स्नेह-समुद्र बनाएँ
तो विश्व-रूप पूरा परिवर्तित पाएँ

तप, त्याग तुम्हारे जीवन का संबल हो
हो अटल अहिंसा-भाव सत्य का बल हो
जन-सेवा-व्रत हो प्यारा ध्येय तुम्हारा
बह उठे विश्व में पुनः प्रेम की धारा

सद् ज्ञान-भानु की शुचि किरणें छिटकाना
अज्ञान-तिमिर कर दूर सुमार्ग सुझाना
मिथ्या विश्वास, कुरीति, भीति, भ्रम, माया
हों नष्ट-भ्रष्ट दमके सुपुण्य की काया

नैतिकता का आदर्श रहे जीवन में
हो सदा एकता मन में, कर्म्म, कथन में
नित सत्य-अहिंसा का व्रत धारण करना
सद्भाव-यान से भवसागर को तरना

नित न्याय-नीति से अक्षय कोष कमाना
कर धर्म्म, विश्व में अचल प्रतिष्ठा पाना
दुर्बल पर बल की धाक न कभी जमाना
निष्काम कर्म्म-सरिता में निशदिन न्हाना

धन की न ज्ञान-रवि पर छलमय छाया हो
जीवन न स्वार्थ-शठ की कुत्सित काया हो
होकर स्वतन्त्र निज सम्मति-मति दर्शाना
भय-पक्षपात से कभी न भाव छिपाना

मानव का अन्तर-वाह्य विशुद्ध बनाना
पुनि व्यष्टि-समष्टि भाव में शुचिता लाना
प्रत्येक क्षेत्र में सत्य-सुधा बरसाना
आत्मा का सुन्दर शुद्ध स्वरूप दिखाना

रह अर्थ-दरिद्र किसी विधि आयु बिताता
पर, धी-दरिद्र जीवित न कभी रह पाता
यों ज्ञान-भ्रष्ट जीने को तो जीता है
वस्तुतः मृतक है, जो खाता-पीता है

मानव समाज से सुख-सुविधा पाता है
सामूहिक श्रम का फल पा हर्षाता है
सामाजिक जीवन व्यक्तिवाद का बल है
वर व्यक्ति-शक्ति के बिना समाज विफल है

सबके मन में सदैव समभाव समाएँ
समता से ही जन सभा-समिति में जाएँ
समता से सब उपभोग करें सुख पाएँ
श्रम से न कभी हम विषम भाव दरसाएँ

मानव मानव का हत्यारा बनता है
सर्वत्र वैर का विष-वितान तनता है
पामर-पशु तक जो पाप नहीं करते हैं
उसको मानव हँस-हँस सिर पर धरते हैं

संगठित रूप से हिल-मिल पैर बढ़ाना
प्रियभाषी हो, उन्नति-गिरि पर चढ़ जाना
तुम तर्क-सिद्ध सिद्धान्त सदा अपनाना
कर मन सुसंस्कृत, निज कर्त्तव्य निभाना

निश्चय ही वातावरण सबल होता है
जिसमें पड़ मानव सूझ-बूझ खोता है
पर, आत्मशक्ति जब प्रबल रूप धरती है
तो विषम परिस्थिति को सुखमय करती है

जिसने कटु कुटकी औषधि में खाई है
उसने मिसरी की गुण-गरिमा गाई है
जिसके जीवन में फटी न पैर बिवाई
वह क्या जाने, होती क्या पीर पराई

जिस शासन में वाणी परतन्त्र रही है
साहित्यिक सरिता भी न स्वतन्त्र बही है
जिसने न कला-कौशल, व्यापार प्रसारे
नित स्वार्थ-सिद्धि के ही कुभाव विस्तारे

जिसमें न हुए विकसित तन, मन, जीवन हैं
कानों में पड़ते रहे करुण क्रन्दन हैं
नंगे-भूखों की आह जहाँ छा जाती
अत्याचारों से लज्जा भी सकुचाती

जिस शासन में अन्याय-नीति चलती है
देती है कष्ट प्रजा को अति खलती है
नृप विषय-विलासी बन प्रमत्त होता है
मानो बिल्ली को दूध सौंप सोता है

जो विषय-विलासी बन अनीति ढाता है
निज द्वेष, दम्भ, दुर्गुण न दृष्टि आता है
जिसको न लोकमत का महत्त्व भाता है
वह नीच निरंकुश शासक कहलाता है

जिस शासन में जनता व्याकुल रहती है
नित अन्न-वस्त्र तक का अभाव सहती है
जिसमें न सुरक्षित हैं, लोगों के जीवन
रोगी शरीर हैं, और मलिनतामय मन

उस शासन का प्रतिवाद निडर हो करना
जन-जनता में सद्भाव-चेतना भरना
अत्याचारों का करना कर्म अधम है
उनका सहना भी नहीं पाप से कम है

तुम विजय-सफलता-श्री सदैव अपनाना
कर्त्तव्य-कर्म्म-पालन में मर-मिट जाना
सब जीवों के हित में अपना हित मानो
प्रभु, सत्य, स्नेह, शुचिता को सब कुछ जानो

ब्रह्मचारी गुरु-आदेश मान घर जाते
आदर्श-रूप से जीवन-जन्म बिताते
वर ब्रह्मचर्य से दीप्त सदा तन, मन था
आत्मा का पुण्य प्रकाश धर्म्म-धी धन था

तब आर्य्य संस्कृति रमी लोक-जीवन में
पुर, नगर, ग्राम, कर्त्तव्य, कथन में—मन में
कल्याण संस्कृति ही सदैव करती थी
दुख-द्वन्द्व दूर कर, पाप-ताप हरती थी

जो जीवन को ऊँचा-उन्नत करती है
जो जन-मन में शुचि भाव सदा भरती है
जो सब प्रकार की उन्नति में साधक है
उस संस्कृति का सारा युग आराधक है

सद्गुण गण का आत्मा में आहित होना
है संस्कृति का शुभ सूक्ष्म समाहित होना
जब क्रिया-रूप में ये सद्गुण आते हैं
तो व्यक्त-रूप 'सभ्यता' कहे जाते हैं

संस्कृति के बिना सभ्यता मिट जाती है
सभ्यता संस्कृति से प्रकाश पाती है
संस्कृति-सभ्यता अभिन्न और मिश्रित हैं
दोनों ही एक-दूसरे पर आश्रित हैं

भौतिक, वैदिक, आत्मिक उन्नति-साधन में
जीवन-यापन में, ईश्वर-आराधन में
आचार-विचार, प्रेम-पद्धति-पालन में
संस्कृति ही थी सब गति-विधि-संचालन में

संस्कृति ही सब में भव्य भाव बोधक थी
कर्त्तव्य कर्म की अविचल उद्बोधक थी
संस्कृतिविहीन मानव दानव होता था
पामरता में पड़ पाप-पुंज ढोता था

सत् काव्य-कला, इतिहास, धर्म, नैतिकता
विज्ञान-ज्ञान, अध्यात्मवाद, भौतिकता
कृषि-कर्म्म, वनिज-व्यवसाय, शिल्प, पशु-पालन,
सबका संस्कृति ही करती थी संचालन

संस्कृति का बल ही सत् समाज का बल था
मानवता का ध्रुव ध्येय, सबल संबल था
आत्मा, मन और शरीर शुद्ध होते थे
प्रसुप्त भाव सब विधि प्रबुद्ध होते थे

यह संस्कृति भी दर्शन ने जन्माई थी
अतएव विश्व-भर में प्रभुता पाई थी
युग-युग बीते संस्कृति न बीतने पाई
है अटल-अचल ऋषि-मुनियों ने अपनाई

दर्शन प्रत्येक तत्त्व का निर्णायक था
वह ईश्वर-धर्म-समर्थक-बलदायक था
दर्शन-ध्रुवधर्म्म एकता दरसाते थे
मानव को मानवता वे सिखलाते थे

दर्शन-द्युति अन्ध-भक्ति को विनसाती थी
हो तर्क-समन्वित ज्योति जगमगाती थी
मन, बुद्धि हृदय में भरी ज्ञान-गरिमा थी
सच्ची श्रद्धा ही मानव की महिमा थी

धर्म्मों का सारा सार इसी दर्शन में
आचार-विचाराधार इसी दर्शन में
शासक-शासित-अधिकार इसी दर्शन में
जीवन के सब व्यवहार इसी दर्शन में

दर्शन ही सत्य-ज्ञान को दरसाता था
तत्वज्ञ, विवेचक, दर्शक कहलाता था
जो सूक्ष्म ज्ञान-विज्ञान-मर्म बतलाता
वह दर्शन ही था, धर्म्मतत्त्व-निर्माता

जिससे परलोक-लोक उन्नति होती थी
संकीर्ण स्वार्थ-परता को जो खोती थी
वर विश्व-प्रेम, बन्धुत्व जगाने वाली
मानव को मानवता सिखलाने वाली

मानवता को जो ऊँचा उमगाती थी
आदर्शों के समीप तक पहुँचाती थी
आचार-विचारों में शुचिता भरती थी
वह जीवन-कला तारती थी—तरती थी

साहित्यकार निर्भय, स्वतन्त्र रहते थे
धन, प्रभुता, पद-मद-भार नहीं सहते थे
कल्याण-भावना हृदयों में उमगी थी
सर्वत्र स्नेह-समता की ज्योति जगी थी

साहित्य-सदन में धन-प्रभुता आती थी
तो बन विनम्र नत-मस्तक हो जाती थी
शारदा मातु के साहित्यिक साधक थे
अनुरक्त, भक्त, सेवक, सत् आराधक थे

कवि, ग्रन्थकार, लेखक, वक्ता, गुरु, ज्ञानी
यति, साधु, सती, सद्भक्त, सन्त, ध्रुव ध्यानी
शिल्पी, व्यवसायी, गायक, चतुर चितेरे
थे कलाकार, कोविद, कृतविद्य घनेरे

प्रतिभा-प्रकाश की उज्ज्वल ज्योति जगी थी
साहित्य-साधना की सत् लगन लगी थी
थे कला-कुशल, शिल्पज्ञ, सुधी, व्यापारी
विद्वान्, वीर, धर्म्मज्ञ, आत्मबलधारी

जीवन-निर्वाह हुआ सबका सुखकर था
आनन्द, स्नेह, सद्भाव भरा घर-घर था
कोई न किसी को दुःख दिया करता था
प्रत्येक व्यक्ति प्रण-पालन पर मरता था

संस्कृत भाषा थी जन-जनता की वाणी
शिक्षा का माध्यम यही लोक-कल्याणी
साहित्य-सृष्टि का साधन यही रही थी
विज्ञान-ज्ञान-गंगा की धार वही थी

समता मानव में ममता उपजाती थी
वह विश्व-प्रेम की किरणें छिटकाती थी
यों जीवों के सुख-दुख अनुभव करते थे
सब में समता, सद्भाव, स्नेह भरते थे

भाषा में भिक्षा-भाव न दरसाते थे
वे उदर-पूर्ति के गीत नहीं गाते थे
थी भीख-भूख से मुक्त लेखनी-वाणी
लेखक-वक्ता की गति-मति थी कल्याणी

मिलने-जुलने के समुचित नियम बनाए
सामाजिक जीवन—शिष्टाचार सिखाए
तब यथा-योग्य व्यवहार विनय-द्योतक था
समता, ममता, शुचिता का उद्बोधक था

'आलिंगन' और 'हस्तसंपीडन' करना
थी प्रेम-प्रदर्शन-विधि अभिवादन करना
मित्रता यज्ञ के सम्मुख की जाती थी
गम्भीर शपथ भी प्रायः ली जाती थी

जब जन-स्वागत-सत्कार किया जाता था
तब पाद्य, अर्घ, मधुपर्क दिया जाता था
गुरुजन छोटों का 'शिरोघ्राण' करते थे
आशिष दे उनको 'महाप्राण' करते थे

तव कथा-वार्ता, व्याख्यान, वर वाणी
थी कौशल-युक्त प्रभावपूर्ण कल्याणी
कर्मठ आचारवान् प्रवचन करते थे
श्रोताओं का अज्ञान-तिमिर हरते थे

सत्संग, कीर्तन, स्वाध्याय होते थे
जो भक्तजनों का मोह-तिमिर खोते थे
थे धर्म्म-प्रेम संलग्न सभी नर-नारी
मानवता-मन्दिर के प्रभु-भक्त पुजारी

ऋषि-मुनियों का सत्संग लाभदायक था
गुणियों का गौरव जीवन-उन्नायक था
गुरुओं से विनय; न्याय में रुचि रखते थे
लोकापवाद का कुफल न वे चखते थे

शिक्षा-प्रद विषयों की चर्चा होती थी
साहित्य-साधना की अर्चा होती थी
इतिहास, धर्म्म-संवाद हुआ करते थे
जिनको सुन-गुन कर श्रोता अनुसरते थे

कानों में सन्त कथामृत वरसाते थे
वाणी से भक्ति सहित प्रभु-गुण गाते थे
मस्तक गुरु-चरणों में नित नत होते थे
अति शुद्ध हृदय दुर्भाव-दम्भ खोते थे

सन्तों की सत्संगति सुबोध देती थी
दुर्गुण, दूषण, दुर्मति द्रुत हर लेती थी
विषयों के विष से सावधान करती थी
जीवन में सदाचार-समता भरती थी

जो वचन लोक-कल्याण किया करते थे
उनको ही सुनते थे; सब आचरते थे
अति सूक्ष्म दृष्टि तेजस्वि भाव दरसाती
मानव में सच्ची मानवता उमगाती

त्यागी तपस्वि गुरु ज्ञान-दान देते थे
जन-सेवा का व्रत साधु-सुधी लेते थे
वे त्याग चुके थे कर्मों की फल-आशा
थी शेष न उनमें कोई भी अभिलाषा

सब पढ़ते-लिखते प्रश्न-विवेचन करते
कर धर्म्म-कर्म्म सत्संग सत्य अनुसरते
उनका विवेक अति निर्मल हो जाता था
विज्ञान-भानु से हृत्तम खो जाता था

इन्द्रियाँ और काया जो सबल बनाते
मन और आत्मा में सुशान्ति सरसाते
परलोक-लोक-हित में निमग्न रहते थे
वे पाप-ताप की मार नहीं सहते थे

जिस भांति सूर्य्य या चन्द्र दिशा दिखलाते
उस भांति सन्त-गुरु शुभ सन्मार्ग सुझाते
वे सत्य-अहिंसा पर-उपकार प्रवृत थे
निष्काम कर्म्म, जन-सेवा में संरत थे

जिसके जीने से अधिक प्राणि जीते थे
आश्रित रहते, पलते, खाते-पीते थे
उसका जीवन ही सफल कहा जाता था
वह देश-जाति में मान-दान पाता था

कर प्रचुर पर्यटन ज्ञान बढ़ाते थे सब
पढ़ प्रकृति-पाठ नित प्रभु-गुण गाते थे सब
ऋषि-मुनियों के आश्रम पर जन जाते थे
सत्संग लाभ कर परम शान्ति पाते थे

ब्राह्मण जग का अज्ञान-तिमिर हरते थे
क्षत्रिय बल से अन्याय दूर करते थे
सब वैश्य अभाव-पूर्ति में रत रहते थे
सेवा-साधन में शूद्र प्रवृत रहते थे

ब्राह्मण आत्मिक बल से माना जाता था
क्षत्रिय शरीर-बल से जाना जाता था
थे वैश्य विशद वाणिज्य-कुशल व्यापारी
बन गये शूद्र सब सेवा के अधिकारी

थी कर्म-कसौटी बड़े और छोटे की
आचरण परख थी खरे और खोटे की
कर कर्म सभी गुरुता-लघुता पाते थे
कर्मों से ही वे पहचाने जाते थे

सब लोग योग्यता से आदर पाते थे
गुण, कर्म्म-कसौटी पर परखे जाते थे
उपयुक्त युवक अनुरूप वधू वरता था,
हो सद्गृहस्थ वह भव-सागर तरता था।

सब वर्णों में सहयोग-स्नेह, समता थी
मानव से मानव को असीम ममता थी
परिवार परस्पर हिल-मिल कर रहते थे
पार्थक्य जन्य दुख-दैन्य नहीं सहते थे

जो ज्ञान-दान देते सेवा करते थे
जनता में नित कर्त्तव्य-भाव भरते थे
वे ज्ञानी, गुणी, अतिथि पदवी पाते थे
संन्यासी, वनी-विरक्त कहे जाते थे

जो अतिथि, साधु, ज्ञानी, पण्डित आते थे
वे श्रद्धा से आतिथ्य नित्य पाते थे
आदृत हो स्नेह-सिक्त भोजन खाते थे
सब विधि सन्तुष्ट-तृप्त होकर जाते थे

आतिथ्य अतिथि का श्रद्धा से करते थे
दुखियों-दीनों की भीर-पीर हरते थे
सब अतिथि पितर-सम ही पूजा पाते थे
वे नायक-उन्नायक समझे जाते थे

मन, वचन, कर्म्म में भिन्न भाव दरसाते
वे थे दुरात्मा; नित धिक्कारे जाते
मनसा, वाचा, कर्मणा एक होते थे
वे मुनि-महात्मा, दुख-दुर्गुण खोते थे

जो स्वार्थ-अन्ध हो, स्वार्थ हेतु जीता था
जिसका जन-सेवा-शून्य जन्म बीता था
वह पामर, पतित, अधम समझा जाता था
वाणी से भी आदर न कहीं पाता था

मग में आते यदि विघ्न न उनसे डरते
मिल-जुल सब उचित उपाय धैर्य धर करते
संकट में बुद्धि बिसार न घबराते थे
निज साहस-बल से सदा विजय पाते थे

कर-कर कोरे उपदेश न ज्ञान जताते
जो कहते, उसे स्वयम् भी कर दिखलाते
थे सच्चरित्र, पटु, कर्म्मवीर, नर-नारी
धर्म्मज्ञ, धीर, विद्वान्, विवेक-विहारी

भय, संशय को कर दूर शूर बढ़ते थे
पौरुष, प्रसार गौरव-गिरि पर चढ़ते थे
वे सक्षम, सुदृढ़, साहसी उद्योगी थे
धर्म्मज्ञ, धीर, विद्वान् कर्म्मयोगी थे

आविष्कारक जन मान-दान पाते थे
वे देश-जाति-गौरव समझे जाते थे
जिनमें प्रतिभा की ज्योति जगमगाती थी
उनको शासन, जन-सत्ता अपनाती थी

हो चिन्ताओं से मुक्त काम करते थे
अभिनव भावों को खोज-खोज भरते थे
बहती थीं नित नूतन विचार-धाराएँ
जो चाहें, आएं, ज्ञान-गंग में न्हाएँ

धन, बल, पद, प्रभुता से न बड़े होते थे
थे बड़े वही जो सुकृत बीज बोते थे
सद्गुण गण से जन-जन में श्रद्धा भरते
निज सुयश-सुगन्ध प्रसार प्रभावित करते

था सदा बड़प्पन छोटों को अपनाना
भर उच्च भाव छोटों में, बड़ा बनाना
जो छोटों में छोटापन उसगाता था
वह 'बड़ा' वस्तुतः बड़ा न बन पाता था

चोरी, व्यभिचार, मानवों का वध करना
विश्वासघात, विषदान, ज्ञान, गुण हरना
कर पाप पुनः छल-बल से उन्हें छिपाना
इत्यादि पातकों को 'अतिपातक' माना

दीनों, दुखियों पर सभी दया दरसाते
कर पुष्कल, दान-प्रदान स्नेह सरसाते
तब निर्धन, पंगु न वृद्ध कष्ट पाते थे
दानी निज यश के गीत नहीं गाते थे

ज्ञानी का ज्ञान राष्ट्र का हित-साधक था
शूरों का तेज शक्ति का आराधक था
वाणिज्य, सम्पदा-सम्भार उमड़ाता था
सेवक सेवा करने में सुख पाता था

अज्ञानी को सब ज्ञान-दान देते थे
दुखियों के सारे संकट हर लेते थे
निर्बल-असहायों के आधार सुदृढ़ थे
वे सदा सत्य के सिन्धु गुणों के गढ़ थे

जीवन की आवश्यकतायें सीमित थीं
भोगेच्छाएँ संयत थीं, अति परिमित थीं
कम-से-कम द्रव्य प्रयोग किये जाते थे
सबको समान सुख-योग दिये जाते थे

दानी सब सात्विक पुण्य-दान में रत थे
निष्काम कर्म्म, पर-हित-साधन वर व्रत थे
विद्या का दान मुख्य समझा जाता था
प्रत्येक प्राणि तब अभय दान पाता था

जो विपदग्रस्त, असमर्थ, सुहितकारी थे
वे द्रव्य-दान के पूरे अधिकारी थे
जो निश-दिन ज्ञान-दान देता फिरता था
उस पण्डित का पोषण समाज करता था

याचकता आदर-स्नेह नष्ट करती थी
गुण-गौरव खोकर ज्ञान-भ्रष्ट करती थी
भिक्षुक या याचक दृष्टि नहीं आते थे
सब श्रम-उद्यम करके पीते-खाते थे

जिस कुल में विधवा, पंगु, अबुध बालक थे
जिसमें न कमाऊ अन्य पितर पालक थे
ऐसे कुल का पति गृह न छोड़ पाता था
कर्तव्य कर्म्म से मुँह न मोड़ पाता था

जिसके कुल या स्वभाव का ज्ञान नहीं था
ऐसे जन को मिलता सुस्थान नहीं था
परिचित-प्रेमी जन गृह-आश्रय पाते थे
वे अतिथि-रूप में ही पूजे जाते थे

तब चौर-कर्म से सबको घोर घृणा थी
पर-द्रव्य-हरण की नेक नहीं तृष्णा थी
पुरुषार्थ और सद्-यत्न सफल होते थे
बन उद्यमहीन न 'दैव-दैव' रोते थे

जिनमें भीतर-बाहर सदैव समता थी
जो सच्चरित्र थे, शुचिता थी—ममता थी
जो परहित पर सर्वस्व त्याग देते थे
वे सेवक जन-सेवा का व्रत लेते थे

घर में घुस कर सड़ना न कभी हितकर था
पुरुषार्थ-प्रयत्न सभी को श्रेयस्कर था
सत् उद्यम में संलग्न रहा करते थे
अनुचित साधन को पाप मान डरते थे

पोथे पढ़-पढ़ जो पण्डित बन जाते थे
सन्तों की संगति में आते-जाते थे
यदि श्रद्धा सहित न प्रभु को अपनाते थे
तो वे अनभिज्ञ-मूर्ख समझे जाते थे

तप से पवित्र सब का सुधन्य जीवन था
सद्भाव, सरलता, शुचिता, सेवा, धन था
आलसी-विलासी, अधम गिने जाते थे
वे जनता में आदर न कभी पाते थे

थे काम- क्रोध, सम्मोह, लोभ, मद, मत्सर
मानव के प्रबल शत्रु हैं, पापों के घर
वे रामराज्य में धिक्कारे जाते थे
रहते थे दूर प्रवेश नहीं पाते थे

तब आत्म-निरीक्षण कर प्रबुद्ध बनते थे
मालिन्य दूर कर मन विशुद्ध बनते थे
कुछ काल व्यक्ति एकान्तवास करते थे
वन-उपवन में जाकर प्रवास करते थे

सब उन्नति का अवसर समान पाते थे
विकसित जीवन, धन, मान, दान पाते थे
सब थे स्वतन्त्र उच्छृङ्खलता न कहीं थी
सुस्थिर मति थी मर्यादा-भंग नहीं थी

आँखों से दिव्य दृश्य देखा करते थे
हाथों से दे-दे दान कष्ट हरते थे
भुजदण्ड समर में विजय-श्री पाते थे
अत्याचारी तव हार-मार खाते थे

तव विश्वधर्म्म की ध्रुवधारा बहती थी
मानवता, समता-स्नेह सहित रहती थी
पर-मत सहिष्णु मिल-जुल विचार करते थे
हठधर्मी से हठ ठान न लड़ मरते थे

मन में अशुद्धता का न वास होता था
यह जीव इन्द्रियों का न दास होता था
भौतिकता से निर्लिप्त पुण्यमय मन थे
सात्विकता से भरपूर शुद्ध जीवन थे

मन में न दुष्ट संकल्प कभी आते थे
आते थे तो घातक समझे जाते थे
अतएव सभी सद्भावपूर्ण नर-नारी
थे शुद्ध, सात्विक, तेज, ओज, बल-धारी

निर्मल मन शुद्ध भावना पर झुकता था
विषमय विषयों से हो सचेत रुकता था
वह सदा इन्द्रियों पर शासन करता था
जीवन में भद्र भावनाएँ भरता था

जो ज्ञान और विज्ञान सभी का ज्ञाता
जो जीवन-यज्ञों का ब्रह्मा-उद्‌गाता
जिनसे नित हृष्ट-पुष्ट होते जन-तन थे
शुभ संकल्पों से युक्त सभी के मन थे

सोते-जगते जो दूर-दूर जाता है
जो ज्योति ज्योतियों की भी कहलाता है
जो दिव्य शक्ति-सम्पन्न धर्म-साधन थे
शुभ संकल्पों से युक्त सभी वे मन थे

मन की पवित्रता कर्म्म विशुद्ध बनाती
सद्‌बुद्धि सदा सत् पथ पर ही ले जाती
जिनसे बनते उत्कृष्ट-उच्च जीवन थे
शुभ संकल्पों से युक्त सभी वे मन थे

सद्ज्ञान, धैर्य, चिन्तन जिसकी गरिमा है
अमृतमय तेजोमय महान् महिमा है
जिनके द्वारा संचालित कर्म्म-कथन थे
शुभ संकल्पों से युक्त सभी वे मन थे

इन्द्रिय-अश्वों के सद संचालनकारी
सुख-दुख के कारण निःश्रेयस्-अधिकारी
जिनसे बनते मानवता-भव्य भवन थे
शिव संकल्पों से युक्त सभी वे मन थे

खुद जिओ, और औरों को भी जीने दो
खुद खाओ-पिओ, और खाने-पीने दो
था यही एक गुरु-मन्त्र शान्ति-सुखदाता
जन-मन में जो सद्भाव-स्नेह उमगाता

थे सदाचार-सम्पन्न सभी के जीवन
नैतिकता से भरपूर मनस्वी थे जन
छल-छद्म स्वप्न में भी न कभी आते थे
कर्त्तव्य-कर्म्म-पथ को वे अपनाते थे

था पुण्य प्रेम से प्रेरित परहित करना
सद्भाव-सुधा मानव-मानस में भरना
था पाप, द्वेष से औरों को दुख देना
कर-कर कुकर्म्म निन्दित हो अपयश लेना

व्यवहार न जो अपने को खुद भाता था
वह औरों के प्रति भी न किया जाता था
पर-पीडन ही था पाप, पुण्य पर-हित था
तब सब के दुःख-दलन में विश्व निरत था

जिससे जीवन आगे बढ़ता जाता है
क्षण-क्षण गौरव-गिरि पर चढ़ता जाता है
जिससे न कभी कोई जन दुख पाता है
वह पुण्य कर्म्म ही धर्म्म कहा जाता है

कर पुण्य, पुण्य-परिणाम सभी पाते थे
बोकर बबूल वे आम नहीं खाते थे
शुभ-अशुभ कर्म्म, शुभ-अशुभ फलों का दाता
यह अटल दार्शनिक तत्व सभी को भाता

मन, वचन, कर्म्म में कभी न दोष समाते
सर्वदा सभी जन भद्र भाव अपनाते
थी यही सफलता, सुषमा, शुचि जीवन की
उच्चता आत्मा और विमलता मन की

भगवान् दीन की क्षुधा-पिपासा में है
संकट-ग्रस्तों की अविरल आशा में है
यह जान सभी का ताप-दाप हरते थे
दुखियों के लिए सदा जीते-मरते थे

मन, वचन, कर्म्म में समता सरसाती थी
ऋजुता, शुचिता जीवन में छा जाती थी
कोई न असद् व्यवहार कभी करता था
सद्धर्म-सलिल से मन-मानस भरता था

वाणी से सत्य-स्नेह सब प्रकटाते थे
कानों को नित कल्याण-वचन भाते थे
तब दृष्टि, कुदृष्टि न हो अनर्थ ढाती थी
समता, शुचिता, सुप्रीति ही दरसाती थी

था सत्य-धर्म्म ही तब सब जनता का बल
जीवन थे सत्य-स्वरूप सात्विक निश्छल
तब दान, त्याग, तप पर ही सब सुस्थिर थे
जनता के धर्म्म-कर्म्म इन पर निर्भर थे

था आत्म-निरीक्षण गुण-दोषों का दर्शक
जिनसे बनता चरित्र उज्ज्वल-आकर्षक
सब लोग आत्म-दर्शन में रत रहते थे
कर दोष दूर, दुर्गुण-दुर्दल दहते थे

जब ज्ञान आचरण में अविकल आता है
तो वह चरित्र में परिणत हो जाता है
मानव-पशु में चारित्र्य-भेद रहता है
चारित्र्यहीन जन को जग पशु कहता है

अध्यात्मवाद पर सब का लक्ष्य अटल था
जीवन का तत्व; यही जीवन-संबल था
भौतिकता में संलिप्त न होते थे जन
थे शान्त, शुद्ध, तत्वज्ञ सभी के जीवन

संकट में धरना धैर्य न विचलित होना
गम्भीर, वीर बन बुद्धि-विवेक न खोना
टूटें आपत्ति-पहाड़ किन्तु मुसकाना
था क्षात्र-धर्म्म का तत्त्व जगत् ने जाना

कलाकृति

कवि-कलाकार की रचना श्रेयस्कर थी
उसकी यश-काया अक्षय, अजर, अमर थी
पुत्रों से तो दो-चार पुश्त चलती है
पर कविता से नित सुयश-ज्योति जलती है

तब कलाकार यश, मान, दान पाते थे
वे देश-जाति-गौरव समझे जाते थे
उनकी सेवा सन्तुष्ट-पुष्ट करती थी
सारे समाज में सुख-समृद्धि भरती थी

थीं प्रचलित चौंसठ कला सर्व उपयोगी
थे कुशल, कलाविद, पण्डित, प्राज्ञ, प्रयोगी
सुख-सुविधा से सम्पन्न स्वस्थ नर-नारी
सद्धर्म-कर्म्म-रत थे, सुविज्ञ-अधिकारी

वे ललित कला से करते थे मनरंजन
संगीत रहा उनके प्रमोद का साधन
इससे सब लोग दीर्घ जीवन पाते थे
बन कर्म्मवीर सब को सुख पहुँचाते थे

संगीत-ज्ञान शिक्षा को बल देता था
एकता-प्रेम-पादप को जल देता था
शुचिता, उत्साह, उमंग, हर्ष भरता था
निष्प्राण जीवनों को सजीव करता था

गन्धर्वकला प्राणों को बल देती थी
मानो सूखी सरिता को जल देती थी
स्वर, राग सरसता कण-कण में लाते थे
जन-जन में जीवन-ज्योति जगमगाते थे

पशु-पक्षि-वृन्द तक मोहित हो जाते थे
संगीत-सुधा-रस पी खो—से जाते थे
जब विज्ञ गुणी गन्धर्व-गान करते थे
सचराचर को आनन्द-दान करते थे

सब वातावरण प्रेममय बन जाता था
सर्वत्र स्नेह ही स्नेह दृष्टि आता था
वह ध्वनिमय नाद महा मंगलकारी था
भवरोग, शोक, चिन्ता, भय, श्रम-हारी था

वर वाद्य यन्त्र थे सुमधुर गौरवशाली
अति श्रवण-सुखद, सुन्दर, शुभ, सरस प्रणाली
जब कुशल वादकों द्वारा वे बजते थे
तो वीर भाव से भर सैनिक सजते थे

बाजे थे तन्त्रीगत या चर्म-प्रसाधित
कुछ रन्ध्रयुक्त थे, कुछ थे धातु-विनिर्मित
वीणा, किन्नरी, विपञ्ची, ज्येष्टा, चित्रा
सारंगी, त्रिशवी, शतचन्द्री, सौमित्रा

दुन्दुभि, भेरी, मर्द्दल, मृदंग, मनमोहन
डमरू, मड्डू, कुण्डली, मुरज, शुभ सोहन
वंशी, मुरली, माधुरी, तोरही, कक्का
तितरी, स्वरनाभि, भृंग, घारी, धुर ढक्का

वल्लरी, कुनजिका, कूर्मी, वीणा, पिनाकी
कपिलास, मधुस्यन्दी, नकुलौष्ठी राकी
आनद्ध, शुषिर, घन, तत वर्गों में वर्णित
हैं वाद्य-यन्त्र-कौशल सब ही को सुविदित

करताल, कांस्यवन, जयघंटा, सु-शक्तिका
घर्घर, मंजीर, कर्त्तरी, झांझ, कंठिका
ये चतुर्वर्ग के वाद्य बजा करते थे
श्रोताओं में आनन्द-मोद भरते थे

तब चित्र-कला का गुण-गौरव छाया था
मृदु मूर्तिकला का भी महत्त्व भाया था
यदि कला-कोर पाषाण-काष्ठ पाते थे
तो सत्य और शिव, सुन्दर बन जाते थे

तूलिका विविध रँग-रेखाओं के द्वारा
करती थी हिय का भाव प्रदर्शित सारा
लकड़ी, मिट्टी, पाहन, पट, भित्ति सुनिर्मित
थे चित्रकला-आधार सजीव सुचित्रित

चित्रों में कलापूर्ण इतिहास निहित था
प्रत्येक दृश्य नैतिक विज्ञान विहित था
अणु-अणु से सबको सद् शिक्षा मिलती थी
आत्मा की मूर्च्छित कल कलिका खिलती थी

कुछ वीर भाव से भरे दृश्य दरसाये
कुछ भक्तिभाव से पूर्ण सजीव सजाये
कुछ प्रकृति-नटी की प्रभुता दिखलाते थे
कुछ मानवता की महिमा सिखलाते थे

सब चित्र कला-कौशल के परिचायक थे
मानवता-पोषक, जीवन उन्नायक थे
पुर-पुरी, भवन, घर-द्वार सुघड़ सज्जित थे
मानो वे कला-कौमुदी में मज्जित थे

सद्भावों से सम्पन्न चित्र अङ्कित थे
सब देख-देख जिनको आश्चर्य-चकित थे
प्रेमानुभूति रेखाओं में उमगी थी
कल कला-कुशलता तन्द्रा तोड़ जगी थी

आचार-विचार वेश-भूषा दरसाती
भारत के वातावरण विशेष दिखाती
जीवन के अंग-अंग की बाँकी झाँकी
अङ्कित करती थी कलाकार की टाँकी

ज्योतिष, खगोल, विज्ञान, विज्ञ, पटु पंडित
गणितज्ञ, दार्शनिक, गूढ़ ज्ञान गुण-मंडित
नक्षत्रों की गति-विधि के गुरु-ज्ञाता थे
तत्त्वज्ञ, विश्व के विमल ज्ञान-दाता थे

तब अंक गणित निष्णात विज्ञ पण्डित थे
वे रेखा, बीज ज्ञान-गरिमा-मण्डित थे
ज्योतिष, ज्यामिति का प्रचुर प्रचार हुआ था
गणितज्ञों, गुणियों का सत्कार हुआ था

ऋतु, कल्प, अयन, संवत्सर वार विधायक
तिथि, पक्ष, मास, क्षण, पल, ग्रह, राशि सहायक
तव ज्योतिष ज्ञान महान् विश्व विश्रुत था
व्यवहार-विहित सद् अनुष्ठान संयुत था

विद्युत या वाष्प-शक्ति के तव ज्ञाता थे
आविष्कारक, शिल्पी, गृह-निर्माता थे
वन श्रमिक सभी श्रमदान दिया करते थे
सब श्रम-विधि पर अभिमान किया करते थे

थे भवन-कला-निष्णात विज्ञ विज्ञानी
नद-नदियों के निर्माता, शिल्पी, ज्ञानी
पर्वत का वक्ष विदार स्रोत संचारे
गंगा, यमुना, सरयू के रूप निखारे

पाषाण मोम की भाँति छील छेनी से
उत्कीर्ण किये कुछ चित्र दृष्टि पैनी से
शुचि शिल्पी के मौलिकता-मधु में पागी
भारत की भव्य भावना जुग-जुग जागी

नदियों के पुल और बाँध विचित्र बने थे
न्हाने-धोने को पक्के घाट घने थे
पशु भी घाटों पर सुख-सुविधा पाते थे
खाते-पीते, न्हाते, आते-जाते थे

निर्माण-कला के अद्भुत दृश्य दिखाये
पर्वत-पट काट-काट कर भवन बनाये
जो अश्व, सिंह, गज, वृषभ-रूप धारी थे
पानी के लिये शुद्ध झरने जारी थे

गिरि-गह्वर में तव ज्ञान-गुफा निर्मित थीं,
सुन्दर, सुरम्य, शुभ चित्रों से चित्रित थीं,
योगीजन जिनमें श्रेय-सिद्धि करते थे
रह पूर्ण शान्त भव-सागर से तरते थे

ऋषि-मुनियों के पावन आवास यही थे
योगी-यतियों के पुण्य प्रवास यही थे
इनसे ही सदा ज्ञान-गंगा बहती थी
जो जीवन को पवित्र करती रहती थी

शिल्पी सुरम्य मण्डप मण्डित करते थे
निज कला-कल्पना की विभूति भरते थे
इनमें विज्ञान-ज्ञान-चर्चा होती थी
संगीत, कला, कोविद-अर्चा होती थी

वे गगनस्पर्शी भवन सुदृढ़, शुचि, सुन्दर
थे ललित-कला के केन्द्र सुरम्य मनोहर
जिनमे प्रकाश की ज्योति जगमगाती थी
कण-कण को क्षण-क्षण वायु न्हिला जाती थी

पाषाण विविध रंगों के अति सुन्दर थे
निर्मित जिनसे प्रासाद, नगर, पुर, घर थे
थी भवनों की निर्माण-कला अति उत्तम
सब कलाकार थे कुशल, अनुभवी, सक्षम

कुछ भवन सहस्र स्तम्भों से संयुत थे
जिनके आकार-प्रकार भव्य अद्भुत थे
कुछ भवनों के सैकड़ों द्वार निर्मित थे
जो वास्तु-कला के केन्द्र, सुघड़-समुचित थे

'पृथ्वीजय', 'मुक्तकोण', 'श्रीवत्स', सुमण्डित,
'सर्वतो भद्र', 'लक्ष्मी-विलास', शोभान्वित
'क्षोणी भूषण', 'भुविशेखर', 'भुवन-सुमण्डन'
'भू-भुवन-तिलक', 'श्री भवन', 'प्रताप-विवर्धन'

ये वास्तु-कला के केन्द्र भवन अति उत्तम
शोभा-सौन्दर्य-दृष्टि से अतुलित-अनुपम
शिखरों पर कीर्ति-पताका फहराती थी
जो रामराज्य की शुचिता सरसाती थी

थे रत्नजटित भवनों के द्वार मनोहर
सुखमूल, सुरम्य, कलामय, शोभन, सुन्दर
वसुधा-वसुंधरा विपुल रत्न दे-दे कर
भरती थी राजकोष, धनपतियों के घर

पुर, नगर दुर्ग की भाँति सुदृढ़ निर्मित थे
गुम्बद, परिखा, प्राचीरों से सीमित थे
अरि-दल न आक्रमण का साहस करता था
तस्कर, वंचक-दल देख-देख डरता था

गंगा, यमुना, गोमती, नर्मदा-धारा
गोदावरि, सरयू, कृष्णा का तट प्यारा
नगरों को आश्रय-दान दिया करते थे
जल-वायु विशुद्ध प्रदान किया करते थे

नदियों में नावों, जल-यानों के द्वारा
चलता था तब व्यवसाय देश का सारा
ये नावें सुखकर सुघड़ बनी होती थीं
पथिकों को लातीं; भार-बोझ ढोती थीं

नावों पर सुन्दर सदन बने रहते थे
जिन पर सुखमूल वितान तने रहते थे
उनमें यात्री सब सुविधाएँ पाते थे
निर्भयता से निश-दिन आते-जाते थे

नदियों के तट पर पथिक-प्रवास बनाए
यात्री के हित सुख-साधन सभी जुटाए
यात्रा न किसी को भार-भूत होती थी
मन-रंजन-विधि सब क्लान्ति-श्रान्ति खोती थी

क्षुद्रा, भीमा, दीर्घा, मन्थरा, सुचपला,
गर्भरा, भया, मध्यमा, परखा, पटला,
दस भेद, नाव-नौकाओं के प्रचलित थे,
जिनकी गति में सन्निहित सभी के हित थे

सागर में सुन्दर पोत सदा चलते थे
वर्षों जल में रहकर न नेक गलते थे
उनकी निर्माण-कला अद्भुत-अतुलित थी
थे सुन्दर, सुदृढ़, सुडौल, सुखद द्रुतगति थी

सागर-यात्रा अविराम हुआ करती थी
वाणिज्य वृत्ति भण्डार सदा भरती थी
यों वैदेशिक सम्पर्क नित्य होते थे
बन कर न 'कूप-मण्डूक' काल खोते थे

पृथ्वी पर चलते, जल पर भी तरते थे
बन व्योम-विहारी त्रिविध-रूप धरते थे
थे वर विमान तब रामराज्य में छाये
चरते, तरते, उड़ते-मुड़ते मन भाये

'शब्दग्राही' यन्त्रों से वे सज्जित थे
'रूपाकर्षण' विधि से सब आयोजित थे
इन पर संवाद लिये-दीये जाते थे
उड़ते विमान के व्यक्ति दीख पाते थे

यन्त्रों के बल से यान-विमान चलाये
'गज – अश्व – द्वारपालादिक – यन्त्र' बनाये
इनका अद्‌भुत उपयोग लाभकारी था
सुविधा-उत्पादक श्रम-संकट हारी था

विद्युत से यान, विमान प्रगति पाते थे
कुछ वाष्प-शक्ति की विभुता अपनाते थे
कुछ वायु-वेग से ही चलते रहते थे
कुछ जल-प्रवाह में बहते, गति गहते थे

वैराज, मणिक, कैलास, त्रिविष्टप, पुष्पक
थे व्योमविहारी यान सुदृढ़, द्रुत, अनथक
महीनों के मार्ग क्षणों में तय कर लेते
पथिकों को सब प्रकार सुख-सुविधा देते

आने-जाने के साधन सुलभ सुखद थे
यन्त्रों से चलते वाहन सुविधा-प्रद थे
आबाल वृद्ध नर-नारी निर्भय जाते
सब यात्रा करने में आनन्द मनाते

रथ सुन्दर, सुदृढ़, सुनिर्मित, सुविधायुत थे
दुतले, तितले, चौतले, अतुल अद्भुत थे
रथ-यानों में वृष-अश्व जुते रहते थे
गजराजों के बल से भी गति गहते थे

गज, अश्व, वृषभ, वाहन, रथ-पथ द्रुतगामी
संचालक थे अति दक्ष, निपुण, नर नामी
मासों के मार्ग दिनों में तय करते थे
निर्भय, निर्द्वन्द्व विचरते थे—चरते थे

कच्चे-पक्के पथ स्वच्छ सुघड़ सुन्दर थे
होते दृढ़ 'वज्रलेप' सब सड़कों पर थे
उड़ती थी धूलि न, वाहन दौड़े जाते
पदचारी जन भी सब सुख-सुविधा पाते

था चौराहों पर यातायात, नियन्त्रण
होता था जिससे कहीं न कुछ, संघर्षण
रथ-यान कुशलता से आते-जाते थे
वे कभी न लड़ते-अड़ते, टकराते थे

यानों की गति-विधि संयत थी, नियमित थी
पथ-सुविधा के अनुसार नियत, निश्चित थी
नगरों में यान मन्द गति से चलते थे
निशि में, सब में सुन्दर प्रदीप जलते थे

निश्चित संख्या में व्यक्ति बैठ पाते थे
मनमाने लोग नहीं लादे जाते थे
वृषभों-अश्वों पर सदय भाव होता था
नियमितता का उन पर प्रभाव होता था

इस भाँति विश्व भारत से सम्बन्धित था
प्रत्येक देश को वृत्त-महत्त्व विदित था
व्यवसाय, शिल्प, वाणिज्य-विकास हुआ था
सर्वत्र समुन्नति का सुप्रकाश हुआ था

थीं सूक्ष्म वेध-शालाएं नगर-नगर में
भरती थीं ज्योतिष-ज्योति-ज्ञान घर-घर में
सब यन्त्रों का निर्माण किया जाता था
जिनसे खगोल-भूगोल दृष्टि आता था

यन्त्रों द्वारा दिश, काल-ज्ञान होता था
क्षण, पल, विपलों का परिज्ञान होता था
तब भाँति-भाँति के "घटी" यन्त्र प्रचलित थे
सब समय बताने में निश्चित-नियमित थे

धनु, चक्र, तोप, छाया घटि-यन्त्र बनाये
नर, वानर, कूर, मयूर-रूप छवि छाये
वे दण्ड, मुहूर्त्त, याम, पल, विपल बताते
अनुपल, दण्डार्द्ध आदि सब कुछ दरसाते

थे सूक्ष्म यन्त्र जो काल, भार-ज्ञापक थे
गर्मी सर्दी या देह-ताप-मापक थे
जो यन्त्र चिकित्सा में प्रयुक्त होते थे
वे व्रण, क्षत, पीड़ा, आधि-व्याधि खोते थे

गर्मी-सर्दी, वर्षा यन्त्रों से जानी
नाड़ी की गति-विधि भी इन से पहचानी
कूपों-नदियों से यन्त्र सिंचाई करते
खेतों-उद्यानों में यथेष्ट जल भरते

श्री रामराज्य मणि-रत्नों से मण्डित था
सर्वत्र रत्न-गुण, गौरव, ज्ञान विदित था
जो ज्ञानी, गुणी, पारखी पढ़ आते थे
वे भेंट-रूप बहुमूल्य रत्न पाते थे

मोती, मूंगा, माणिक्य, वज्र, ज्योतीरस
पुखराज, पाचि, गोमेद, पुलक, भल्लातक
धूली, भुजंग मणि, इन्द्रनील, सौगन्धिक
वैदूर्य्य, तुथक, नीलम, गिरिवज्र, थविर, विक

श्री चन्द्रकान्त या सूर्य्यकान्त मरकत मणि
रुधिराक्ष, राजमय, पुष्पराग, चिन्तामणि
उत्पल, पीलू इत्यादि रत्नमणि-माला
थी रामराज्य की विमल विभूति विशाला

सोना, चाँदी, कुसुमों के आभूषण थे
जिनमें सुन्दरता से मण्डित मणि-कण थे
चन्दन या अंगराग-लेपन होता था
सुखदा सुगन्धि से प्रमुदित मन होता था

सूती, ऊनी, रेशमी, शुभ्र, चमकीले
सोना-चाँदी-संयुक्त सुरम्य-रँगीले
बहु भाँति वसन जन-जन के मन-भावन थे
कुश-वल्कल से सन्तुष्ट तपस्वी जन थे

जीवन में आडम्बर का नाम नहीं था
कुत्सा या कृत्रिमता का काम नहीं था
स्वच्छता, सादगी सबने अपनायी थी
मितव्ययता की ऋजुरीति सदा भाई थी

कृषि-वाणिज्य

खानों से खनिज पदार्थ मिले मन भाए
वनदेवों ने वर वन-वैभव बरसाए
कृषि-अन्न-वस्त्र दे देश-कोष भरती थी
गोमाता गोरस-दान दिया करती थी

साधन, सुविधा कृषिकार सदा पाते थे
वे अति महत्त्वमय अंग कहे जाते थे
तब स्वल्प राज-कर लगे प्रजा-जन पर थे
खेती, क्यारी, घर-घाट आय, धन पर थे

मरु भूमि जोतना कृषि के योग्य बनाना
भू-सम्पति का उपयोग मुख्यतम माना
जिस पर रह-सह कर अन्न-वस्त्र पाते थे
उस जन्म-भूमि के गुण-गण सब गाते थे

ज्ञानी, कवि, पण्डितादि खेती करते थे
वे अन्न, तूल, तृण से घर-पुर भरते थे
जो कार्य देश को सुखी-समृद्ध बनाते
उनके करने में कभी न तब सकुचाते

कृषिकार, श्रमिक ऐसी शिक्षा पाते थे
प्रतिभा के बल से झट पटु बन जाते थे
कृषि, शिल्प, उच्चता, ऋजुता के बोधक थे
श्रम-हीन भावना के सद् संशोधक थे

शिक्षित हो शिल्पी शिल्प-कर्म्म करता था
कुल-धंधे में वह कुछ न शर्म्म करता था
यों शिल्प-कला ऊँची उठती जाती थी
सब थे स्वतन्त्र : नौकरी नहीं भाती थी

कृषिकार तपस्या घोर किया करते थे
धन-धान्य आदि से देश-कोष भरते थे
नव अन्न-वस्त्र की बहुतायत रहती थी
जनता न स्वप्न में भी संकट सहती थी

उद्यम-धन्धे, व्यवसायों में रस लेते
तन्मयता से सब काम सरुचि कर देते
नित भीख-भीख जीवन न विताते थे वे
मन में आशा-रवि-रश्मि उगाते थे वे

थे कृषक-श्रमिक उद्योगी कुशल सुशिक्षित
सब दुर्व्यसनों से दूर, धर्म्म से परिचित
जनता की सेवा प्रेम-भाव से करते
भण्डार देश का सुख-समृद्धि से भरते

श्रम करता, भरता, खेत जोतता-बोता
वह कृषक भूमि-स्वामी, अधिकारी होता
जो व्यक्ति स्वयम् कृषि-कर्म्म न कर पाता था
वह भूमि-स्वत्व वंचित् समझा जाता था

अतिवृष्टि, अवृष्टि न अन्य ईति का भय था
सारा समाज निश्चिन्त और निर्भय था
कृषि, अन्न-वस्त्र भरपूर दान करती थी
वृक्षावलि दे फलराशि पेट भरती थी

थी देव-मातृका—नदी-मातृका खेती
भरपूर अन्न-पट दे कृतार्थ कर देती
मिलती थीं सस्ती वस्तु सुखी जीवन था
गोधन ही तब कृषकों का सच्चा धन था

गम्भीर कूप खेतों को जल देते थे
सूखे-सिकुड़े पौधों को बल देते थे
कूपों पर रस्सी-डोल पड़े रहते थे
जिससे न पिपासित लोग कष्ट सहते थे

नलिनी, नद-नदी, प्रस्रवण, वापी, निर्झर
पल्वल, उद्भेद, कूप, कुल्या, सागर, सर
नित-प्रति जल दे भण्डार-भाण्ड भरते थे
उपवन, उद्यान, खेत-सिंचन करते थे

खेती के लिये बाँध बाँधा जाता था
जिससे वर्षा-जल व्यर्थ न बह पाता था
उर्वरा शक्ति बढ़ती-चढ़ती जाती थी
अन्नादि भूमि अधिकाधिक उपजाती थी

कृषि-साधन जो सर्वत्र काम में आते
फल, लांगल, सीता, सीर, स्तेग कहाते
राजा-मन्त्री कृषि स्वयम् किया करते थे
वे खेत जोतते, बोते थे, भरते थे

तब कन्द, मूल, फल, शाक-पात होते थे
जीवन-उपयोगी विविध वस्तु बोते थे
होकर अति तृप्त वनस्पति, फल खाते थे
तन, मन से हृष्ट-पुष्ट सब दिखलाते थे

जिस ऋतु में जो-जो खाद काम आते थे
फल, फूल, तूल, अन्नादिक उपजाते थे
वे खाद उपज को बहुत बढ़ा देते थे
इस भाँति कुशल कृषिकार लाभ लेते थे

कुछ खाद फलों का स्वाद बदल देते थे
रोगी वृक्षों-विरवों को बल देते थे
तप, शीत, वृष्टि का वेग न उन्हें सताता
थे वृक्ष-ज्ञान के ज्ञाता : कृषक-विधाता

अतिरिक्त भूमि में शाक-पात करते थे
वारी-फुलवारी से क्यारी भरते थे
जो वस्तु स्वास्थ्य-विपरीत कही जाती थी
उसकी न कभी तब खेती हो पाती थी

कृषि के अगणित उपयोग लाभ पहुँचाते
तरु, जड़ी, बूटियाँ, ओषधियाँ सब पाते
अनुभवी चिकित्सकगण प्रयोग करते थे
पीड़ित लोगों के रोग-शोग हरते थे

पृथिवी के मापक 'पारावर्त' 'निवर्तन'
थे 'कंस' 'रज्जु' 'दण्डादि' सुनिश्चित साधन
रखता था भूविभाग धरती का लेखा
कर, आय, उपज-उत्पादन का अवलेखा

सब श्रमिक नियत-निश्चित वेतन पाते थे
सुख से रहते-सहते, पीते-खाते थे
उद्यम से हीन न नर-नारी रहते थे
श्रम-जीवन को सम्मान सभी देते थे

जब नया अन्न खेतों से घर आता था
तब 'नवान्नेष्टि'–'आग्रयण' किया जाता था
नव-निर्मित गृह में 'वास्तु-शान्ति' होती थी
'स्वस्त्यन क्रिया' सब आधि-व्याधि खोती थी

जिस भाँति ज्ञान का-बल का तब गौरव था
उस भाँति सुरभि-दल का उड़ता सौरभ था
गोदुग्ध ज्ञान, बल, तेज, ओज-दाता था
वह राष्ट्र जीवनाधार, सर्वत्राता था

गो-रक्षा परम धर्म्म माना जाता था
गो-वधक राज्य से घोर दण्ड पाता था
गो-वृषभ अमित उपकार किया करते थे
जीवन के साधन दान दिया करते थे

गो-वंश पौर-परिवार सदृश रहते थे
वे किसी भाँति का कष्ट नहीं सहते थे
सब प्रजा प्रेम-आदर से अपनाती थी
दे ग्रास उन्हें पहले, फिर खुद खाती थी

पशुओं पर प्रेम-प्रीति सब सरसाते थे
भय-भाव न उनके मन में उपजाते थे
भयभीत गाय का दूध रोग करता था
पीने वाले का स्वास्थ्य-सत्व हरता था

कहते हैं, राग मेघ-वर्षा करते थे
दीपक की ज्योति जगाते तम हरते थे
हो मुग्ध दुग्ध गायें प्रभूत देती थीं
चारा तज हरिण-हरिणियाँ रस लेती थीं

चरने को चहुँदिश गोचर भूमि घनी थी
रहने को सुखमय सुन्दर शाल बनी थी
पीने को नित निर्मल पानी पाते थे
घर आकर भी दाना-चारा खाते थे

गायें गज-सी निःशुल्क विचरतीं-चरतीं
घृत-माखन से भण्डार देश का भरतीं
तब दूध-दही की धार बहा करती थी
सारी जनता परितृप्त रहा करती थी

पानी के बदले दूध दिया जाता था
सादर सबका सत्कार किया जाता था
खा-पी गो-रस जन हृष्ट-पुष्ट रहते थे
वे निर्बलता की मार नहीं सहते थे

गोवत्स कृषक के त्राण-प्राण चालक थे
मानव क्या प्राणिमात्र के परिपालक थे
पट, अन्न, तेल, तिल, रस वे उपजाते थे
उनके प्रयत्न से सब पीते-खाते थे

रथ-यानों में जुत वृषभ लोक-हित करते
बोते-जोतते खेत-क्यारी वे भरते
गोवंश सभी को था सब विधि सुखदायक
जन-जन था गोकुल-भक्त और गुण-गायक

गोवर गोमूत्र काम कृषि के आते थे
बन खाद अन्न अधिकाधिक उपजाते थे
सचमुच उस समय लोक की गो माता थी
कल्याण-कारिणी जन-जन की त्राता थी

गोशालाएं अति स्वच्छ, सुखद, सुन्दर थीं
पशु-पालन की विधियाँ सब श्रेयस्कर थीं
दुर्गन्ध युक्त आवास न कभी सुहाता
शुचि-शान्त वायुमण्डल गायों को भाता

यदि कोई पशु कुछ रोगी हो जाता था
चिन्तित किसान तव चैन नहीं पाता था
लगकर अमोघ उपचार किया जाता था
सब भाँति उसे आराम दिया जाता था

पशु-पक्षिगणों के पृथक चिकित्सालय थे
सब में सबके प्रति भाव सप्रेम-सदय थे
कोई न किसी का दुरुपयोग करता था
अन्याय, पाप, पर-पीडन से डरता था

गो-हत्या पाप किसी से बन जाता था
तो वह जघन्य अति पापी कहलाता था
बन क्रूर कलंकी घर-घर चिल्लाता था
अपना कुकर्म्म कह-कह 'हा-हा' खाता था

उत्पादन का समुचित प्रबन्ध रहता था
वितरण का स्रोत सदैव स्वच्छ बहता था
उपभोगों का परिणाम शान्ति-दाता था
आदान-प्रदान यथाविधि हो जाता था

व्यापारी वर्ग विश्व का हित-साधक था
गृह-उद्योगों में कौन भला बाधक था
सब लाभ देश-जनता को पहुँचाते थे
बन स्वार्थ-सिन्धु सब कुछ न हड़प जाते थे

धनवान न अपने वृहत कोप भरते थे
दे दान द्रव्य का सदुपयोग करते थे
पर-हित, पर-सेवा मे सब रत रहते थे
बन दीन-हीन नागरिक न दुख सहते थे

निर्धन-धनियों में शान्तिमयी समता थी
दोनों में पारस्परिक प्रीति-ममता थी
तब वर्गयुद्ध का नाम न सुन पाते थे
सहयोग सहित सबको सब अपनाते थे

जो स्वार्थ-अन्ध हो धन-संग्रह करता था
वंचकता को परिपोष कोष भरता था
जिसको समाज-कल्याण नहीं भाता था
वह पाप-कीट निन्दित समझा जाता था

अति उचित भोग-उपभोग द्रव्य-धन का था
धन-संग्रह ही बस लक्ष्य न जीवन का था
धन धरणी में गड़ कर न सड़ा करता था
व्यवसाय साधता—भीर-पीर हरता था

जो धनी न धन का सदुपयोग करता था
उसका सारा धन राम-राज्य हरता था
इससे न द्रव्य का दुरुपयोग होता था
जन-हित में ही उसका प्रयोग होता था

आयात और निर्यात वणिक करते थे
विक्रेय वस्तुओं को धरते-भरते थे
अति उचित मूल्य पर माल सदा बिकता था
सर्वत्र एक ही भाव नित्य टिकता था

व्यापार-विकेन्द्रीकरण-प्रथा प्रचलित थी
शोषण-विधि निन्दनीय थी; अति गर्हित थी
वंचकता से जन धन न कमाते थे तब
शोषक श्रीमान् न 'बड़े' कहाते थे तब

जिनसे उद्यम, व्यापार समुन्नति पाते
वे 'पूग' 'निगम' 'श्रेणी' 'संघटन' कहाते
ये संस्थाएं ही दर निश्चित करती थीं
अति कौशल से धन-धान्य प्रचुर भरती थीं

विक्रेय वस्तु पर सीमित लाभ उठाना
अति अल्प मूल्य ले घर-घर में पहुँचाना
इस विधि को विक्रेता गण अपनाते थे
विपरीत कार्य कर घोर दण्ड पाते थे

कोई न किसी विधि 'मिश्रण' कर पाता था
विक्रेय वस्तु में शुद्ध भाव भाता था
घटिया को बढ़िया वस्तु न बतलाते थे
जो जैसी थी वैसी ही दरसाते थे

था कुटी-शिल्प का आदर तब घर-घर में
उद्यम-धन्धे फैले थे नगर-नगर में
लोलुप-लीला का विस्तृत जाल नहीं था
बेकारी का आया भूचाल नहीं था

नागरिक उचित धन्धों को अपनाते थे
सुख से रहते-सहते, पीते-खाते थे
सम्पत्ति न कुछ धनियों ही को वरती थी
समता से जन-जन को कृतार्थ करती थी

तब शिल्पी बिक्री की जो वस्तु बनाते
व्यापार-चिह्न-चिह्नित बाजार में लाते
व्यापारी अपना पृथक चिह्न धरते थे
इस भाँति लोग व्यापार-शिल्प करते थे

व्यापारी देश-विदेश जहाँ जाते थे
सर्वत्र भोजनालय विशुद्ध पाते थे
सबको प्रवास के साधन सरल-सुलभ थे
सुविधा थी, भोग्य पदार्थ न तब दुर्लभ थे

कृषि, गोपालन, गोसंवर्द्धन पर बल था
गज, अश्व-वंश-वर्द्धन का भाव सबल था
विनिमय-माध्यम थी गाय : निष्क मुद्रा थी
तब नाप-तोल की प्रचलित उचित प्रथा थी

स्वास्थ्य

आरोग्य, धर्म्म का शुभ साधन जाना था
निर्बल शरीर पापों का फल माना था
नीरोग, स्वस्थ सब रहें, यही चिन्तन था
सुन्दर शरीर, शुचि हृदय, मोदमय मन था

कर कर्म्म सभी मानव शतायु होते थे
आलसी-प्रमादी बन न काल खोते थे
सौ वर्षों से भी अधिक जिया करते थे
कायर-क्रूरों की मृत्यु नहीं मरते थे

ये हृष्ट-पुष्ट नर-नारि श्रमी, उद्योगी
कोई न कहीं था शिथिल, अलसी, रोगी
बालक सुन्दर, दृढ़, स्वस्थ राष्ट्र-अभिमानी
पालक थे शिक्षित, शिष्ट अनुभवी, ज्ञानी

वृद्धों का भी बल क्षीण न हो पाता था
संयत जीवन, नवजीवन-सा लाता था
वे ज्ञान-क्रिया-सम्पन्न सदा रहते थे
तब जरा-जन्य आपत्ति नहीं सहते थे

आचार-विचार विमल, संयम व्रत-पालन
तन पुष्ट, आत्मा शुद्ध और निर्मल मन
आशा, उत्साह, स्नेह, सुख, सात्विक भोजन
करते रहते थे, नित आयुष्य-विवर्धन

मिथ्या आहार-विहार नहीं होता था
रोगों से जन-संहार नहीं होता था
भोगों का प्रबल प्रहार नहीं होता था
औषधि का अति व्यवहार नहीं होता था

सात्विक भोजन बल-वीर्य्य आयु-वर्द्धक था
राजसिक—विलासी, भोग-योग साधक था
तामसिक—बुद्धि-बल नष्ट-भ्रष्ट करता था
दुर्भाव, दम्भ भर, तेज, ओज हरता था

जो व्यक्ति अन्न प्रतिदिन जैसा खाता है
उसका स्वभाव वैसा ही बन जाता है
जो पाप-कमाई का भोजन करता है
वह ज्ञान-भ्रष्ट हो; श्वान-मृत्यु मरता है

वह तत्त्व सभी ने ठीक समझ पाया था
सात्विक भोजन का भाव सदा भाया था
जो सत्य साधनों से शुचि अर्थ कमाते
उनका विशुद्ध भोजन ही बुधवर खाते

चिरजीवी हो कर्त्तव्य-कर्म्म करते थे
पितरों के आगे पुत्र नहीं मरते थे
था स्वस्थ-संयमित जीवन जन-जनता का
पद का मद था न किसी को बल प्रभुता का

रुजता लज्जा का कारण बन जाती थी
तन-मन की निर्बलता समझी जाती थी
आचारवान रोगार्त नहीं होते थे
वे अन्य जनों की आधि-व्याधि खोते थे

अति क्रिया-कुशल, वर वैद्य शास्त्र-पारंगत
सहृदय, निरीह, निर्लोभ धर्म्म ध्रुवता-रत
वे शल्य और शालाक्य ज्ञान के ज्ञाता
अष्टांग चिकित्साभिज्ञ स्वास्थ्य सुखदाता

शव-छेद-क्रिया का ज्ञान विशद-विस्तृत था
शल्यक-वैद्यों से हुआ सभी का हित था
थीं रामवाण औषधियाँ प्राण-प्रदायक
आरोग्य-विधायक सुन्दर स्वास्थ्य-सहायक

व्युत्पन्न वैद्य तव रोग-शोक-हारी थे
अनुभवी, सुधी, प्रियदर्शन, हितकारी थे
थीं रामवाण सब ही अमोघ औषधियाँ
अति सरल, शुद्ध, सुखकर थीं, सबकी विधियाँ

वे शुल्क बटोर-बटोर न घर भरते थे
निःस्वार्थ भाव से वैद्य कर्म्म करते थे
था पुण्य कार्य, व्यवसाय न थी कविराजी
सर्वत्र चिकित्सा गण की गरिमा गाजी

तब ओषधि का निर्माण शुद्ध-सुन्दर था
थी विश्वसनीय न मिश्रण का कुछ डर था
सर्वत्र सुलभ-सस्ती वह मिल जाती थी
निर्धन जनता तो बिना मूल्य पाती थी

जिन वैद्यों को अनुभव न ज्ञान होता था
उनको न चिकित्सा का विधान होता था
यदि मूल-भ्रान्ति से रोगी मर जाता था
तो अज्ञ चिकित्सक राजदण्ड पाता था

परिचारक स्नेह सहित सेवा करते थे
रोगी में आशा, स्नेह-भाव भरते थे
रोगों से रोगी शीघ्र मुक्ति पाते थे
गृह-सदृश चिकित्सालय समझे जाते थे

प्रारम्भिक रोक-थाम रोगों की करना
व्रण-आघातों का कष्ट यथाविधि हरना
आकस्मिक संकट-शिक्षा सब पाते थे
बन "किं कर्त्तव्य विमूढ़" न घबराते थे

निःशुल्क चिकित्सालय खोले जाते थे
रोगीगण जिनमें सुख-सुविधा पाते थे
पीयूषपाणि अनुभवी चिकित्सक जन थे
निर्लोभ, सत्य-सम्पन्न, शुद्ध तन-मन थे

अलगर्द्द, कुरुक, शकुन कृमियों की माया
थी स्वास्थ्य-विघातक; करती थी कृश काया
सब ओषधियाँ कृमिजन्य रोग हरती थीं
सबको नीरोग, स्वस्थ, सुन्दर, सुपुष्ट करती थीं

नित स्वास्थ्य-प्रसारक, पोषक द्रव्य जलाते
आरोग्य-प्रदायक वायु विशुद्ध बनाते
रोगों के अंकुर नष्ट-भ्रष्ट करते थे
सुखदा सुगन्ध नभ-मण्डल में भरते थे

रवि-चन्द्र रश्मियाँ अमृत बरसाती थीं
निर्बल तन-मन में प्रचुर शक्ति लाती थीं
सब भानु-प्रभा से अमित लाभ पाते थे
सुखकर सुधांशु की किरणों से न्हाते थे

जो जन नियमित गंगा-जल ही पीते थे
वे हृष्ट-पुष्ट रह अधिक दिवस जीते थे
गंगा-जल की सबसे बढ़कर महिमा थी
प्रत्येक दृष्टि से उसकी गुण-गरिमा थी

विष के कीटाणु नष्ट कर देता है यह
जीवन में स्वास्थ्य-सुधा भर देता है वह
यह पाप-रोगियों को विशेष हितकारी
वन, जीव, जन्तु, जन का अनन्य उपकारी

महिलाएँ

नारी का आदर मुख्य कर्म्म माना था
उसको मानवता का महत्त्व जाना था
वह प्रेम, धर्म्म, कर्त्तव्य, ज्ञान-गरिमा थी
शुभ-चिन्तक, साथिन, शुचि, सुमित्र सुषमा थी

उसको नित आदर-दान दिया जाता था
उसके कारण अभिमान किया जाता था
तब दिव्य भोग, गुण से घर भर जाता था
प्रत्येक व्यक्ति देवता दृष्टि आता था

सब सती, सुन्दरी, सभ्य, वीर, विदुषी थीं
सद्धर्म-धाम, सद्भावमयी पत्नी थीं
वे ललित कलाओं में प्रवीणता पातीं
प्रतिभा की पुण्य-प्रभा प्रभूत दिखलातीं

थीं पतिव्रताएं-पतिप्राणाएं नारी
जिनसे गृहस्थ थे सभी स्वर्ग-अधिकारी
घर-घर तब लक्ष्मी के निवास-मन्दिर थे
व्यवहार, भाव, चिन्तन, सुदिव्य-सुन्दर थे

गृह-कर्म्मों में व्युत्पन्न सुशीला नारी
करती थीं, निश-दिन स्वगृह-व्यवस्था सारी
सद्गुण-गण के कारण पूजी जाती थीं
वे धीर-वीर वर बालक जन्माती थीं

वे आडम्बर या अपव्यय कभी न करतीं
धन-धान्य आय अनुसार सँगा कर धरतीं
सब घर को स्वर्ग समान बना देती थीं
गृह-जीवन का आदर्श दिखा देती थीं

तब परिवारों में कलह नहीं होता था
संकीर्ण स्वार्थ सद्भाव नहीं खोता था
गृह-नीति, प्रीति की रीति सिखाने वाली
थी धर्म्म-धाम का द्वार दिखाने वाली

शिशुओं के कल-कल नाद हुआ करते थे
उनके प्रसन्न मुख दुख-चिन्ता हरते थे
पत्नियाँ स्नेह-ममता की आराधक थीं
पतियों के आदर्शों की सत साधक थीं

वे देश, जाति, सेवा में रत रहती थीं
निज धर्म्म, कर्म्म में सब सहमत रहती थीं
शिशुओं का पालन प्रेम-भाव से करतीं
उनमें शैशव से भद्र भावना भरतीं

शैशव में ही सद्भाव भरे जाते थे
यौवन में सब सद्गुण प्रकाश पाते थे
जीवन का दृढ़ आधार सदा शैशव था
यह शैशव ही मानवता का वैभव था

पुत्री का जन्म पुत्र-सम सुखदाता था
दोनों में अन्तर-भेद न कुछ आता था
पालन-पोषण-शिक्षण समान होता था
सब विधियों का विधिवत् विधान होता था

सुख-दुख, रन-वन में नारी का गौरव था
नारी के बिना गृहस्थ निरा रौरव था
नारी युद्धों में प्रण कर अड़ जाती थी
अरिदल की सारी सैन्य उखड़ जाती थी

नारी में आत्मत्याग-अनुराग अटल था
सेवा का सच्चा-सुन्दर भाव सबल था
वात्सल्य, स्नेह, श्रद्धा की वह रानी थी
जगदम्बा-अन्नपूर्णा जग-जानी थी

कल कुसुमों से भी कोमलतर महिलाएं,
थीं कठिन कुलिश से भी सुवीर बालाएं
उनके समक्ष जब जो अवसर आता था
तब तदनुसार ही हिय भी बन जाता था

नारी बन्धन का हेतु नहीं थी नर को
वह पार कराती थी इस भव-सागर को
'पत्नी' या 'माता'-रूप त्राण करता था
नारी का शुभ सहयोग कष्ट हरता था

पुरुषों की भाँति नारियाँ भी पढ़ती थीं
कर त्रिविध विकास पुण्य-पथ पर बढ़ती थीं
वे राज-काज में भाग लिया करती थीं
सब कामों में सहयोग दिया करती थीं

अनुचित अवगुण्ठन-प्रथा नहीं प्रचलित थी
महिलाओं की सर्वत्र प्रगति थी—गति थी
पतियों के साथ यज्ञ, क्रीड़ा करती थीं
रन, वन, अभिषेक सभी में अनुसरती थीं

यदि महिला-दल भ्रमणार्थ कहीं जाता था
प्रत्येक पुरुष अति आदर दरसाता था
सर्वत्र विशिष्ट शिष्ट आसन पाती थीं
यानों में आगे बैठाई जाती थीं

वैदिक विवाह् उद्देश्य उच्च उज्ज्वल था
पति-पत्नी में उमड़ा सद्भाव सबल था
दोनों की भोग-वृत्तियाँ शुचि संयत थीं
जीवन-आवश्यकताएं भी निश्चित थीं

इन्द्रिय-निग्रह् पर ध्यान दिया जाता था
पूरे संयम से काम लिया जाता था
सन्तानों की उत्पत्ति सदा सीमित थी
जन-संख्या भारत की नितान्त परिमित थी

कन्याविवाह् में जितना धन पाती थी
उपहार-रूप थाती समझी जाती थी
वर माँग-जाँच ठहराव नहीं करते थे
ठहरा-ठहरा कर कोष नहीं भरते थे

थे सब प्रसन्न दम्पति के प्रेम-मिलन से
वर वैदिक विधि-सम्पन्न सुव्रत बन्धन से
सब नियम-सत्य के थे असीम अभिलाषी
उस परम पिता प्रभु के सच्चे विश्वासी

आदर्शयुक्त वैदिक विवाह वर विधि थी
जीवन-भर व्रत-बन्धन की पुण्य अवधि थी
कर अग्निदेव को साक्षी प्रण करते थे
वर-वधू प्रतिज्ञा-हित जीते-मरते थे

दो हृदयों का आपस में घुल-मिल जाना
भौतिक सम्बन्धों को भी सुदृढ़ बनाना
आजन्म साथ देना व्रत-वचन निभाना
जीवन में शुचिता, सत्य, स्नेह सरसाना

जिस भाँति चन्द्रिका चन्द्र नहीं तजती है
दामिनि मेघों में दमक-चमक छिपती है
इस भाँति नारि नर में विलीन हो जाती
दोनों अभिन्न, फिर किसे भिन्नता भाती

वर-वधू विवाहों में जो व्रत लेते थे
वे वचन-बद्ध दोनों को कर देते थे
इन व्रत-वचनों का पूरा पुण्य प्रदर्शन
है कठिन, किन्तु करिये कुछ-कुछ दिग्दर्शन

हे पत्नी, मैं तुम साथ सदैव रहेंगे
सुख-दुख, सम्पत्ति-विपत्ति समान सहेंगे
कर तेरा पालन-पोषण सुख पाऊँगा
होगी सन्तानवती तव हर्षाऊँगा

मैं इन्द्र समान और तू पृथिवी सम है
दोनों में गुम्फित प्रेम निसर्ग-नियम है
मैंने तू पाई, तूने मुझको पाया
कैसा सुन्दर सुयोग प्रभु ने दिखलाया

मैं-तुम दोनों परलोक-लोक साधेंगे
पर-हित-रत रह परमेश्वर आराधेंगे
हम दोनों के सहयोग-योग से सारा
होगा गृहस्थ-जीवन सम्पन्न हमारा

मेरा-सा तुम भी अपना चित्त बनाना
मेरा-सा हृदय सुपत्नी, तुम भी पाना
मेरे व्रत से हिय हो परिपूर्ण तुम्हारा
हों हम अभिन्न, हो नित कल्याण हमारा

हम बन बलिष्ट, धर्म्मिष्ठ स्नेह सरसाएं
सन्तति सुबोध, सुन्दर, सुपुष्ट जनमाएं
नित शान्ति-कान्तिमय रहें, धर्म्म अपनाएं
पर-हित-साधन में जीवन-जन्म बिताएं

दृढ़ नियम सत्य पर सदा सृष्टि रहती है
दृढ़ नियम सत्य पर धर्म्म-धार बहती है
दृढ़ नियम सत्य जीवन-आधार अटल है
दृढ़ नियम सत्य ही हम दोनों का बल है

दृढ़ नियम सत्य पर ही गृहस्थ-जीवन है
दृढ़ नियम सत्य ही सद् गृहस्थ का धन है
ज्यों जल में जल मिल भेद-भाव खो जाए
त्यों हम दोनों का एक भाव हो जाए

यह सुदृढ़ शिला हमको क्या सिखलाती है
हों अचल-अटल प्रण पर यह बतलाती है
नित पालन करें गृहस्थ धर्म्म-संयम से
हो जीवन का उपयोग नियम से-यम से

यदि सती, तुम्हें कोई कुदृष्टि से ताके
दुर्भाव, दम्भ या क्रूर भाव से झाँके
तो उस दानव का दर्प नष्ट कर देना
बन अति प्रचण्ड; उद्दण्ड भाव हर लेना

हे पत्नी, रहे अटल सौभाग्य तुम्हारा
सौ वर्ष बहे दोनों की जीवन-धारा
प्रभु कठिन गृहस्थाश्रम-पालन का बल दे
सानन्द रहें हम; गति, मति अति अविचल दे

जब पति गृहस्थ का भार शीष धरता था
तब पत्नी का कर पकड़ विनय करता था
हे ईश, हमारा प्रेम-पुण्य दृढ़तर हो
हम हों आदर्श गृहस्थ सुपावन घर हो

वैदिक विवाह का व्रत-उद्देश यही था
ऋषि-मुनियों का उत्तम उपदेश यही था
दम्पति उपकार, लोक-संग्रह में रत थे
तप-त्याग, सत्य-सेवा में सब सहमत थे

जो जन भ्रमवश निज वहु विवाह करते थे
वे वेद-विरोधी पद्धति अनुसरते थे
उनका जीवन संकट में पड़ जाता था
यह कृत्य किसी को भी न कभी भाता था

पति-पत्नी में सद्भाव, स्नेह-समता थी
दोनों में एक दूसरे की ममता थी
इस से घर में सुखदा-समृद्धि होती थी
सन्तान, माल, धन-धान्य-वृद्धि होती थी

जब नव दम्पति विवाह कर घर आते थे
तो पूज्य पुरोहित से आशिष पाते थे
प्रियजन स्वागत कर उचित मान देते थे
गुरुजन हित से उपदेश-दान देते थे

हे मंगलमय भगवान, विश्व हितकारी
हे सदय सच्चिदानन्द सर्व-हितकारी
तू अज अनन्त अखिलेश अमर अक्षर है
वर वरुण वरिष्ठ विनायक विश्वम्भर है

ऋषि-मुनि, योगी-यतियों ने तू अपनाया
है अपरम्पार न पार किसी ने पाया
तू जगत्ज्योति जगदीश दिव्य दाता है
तू ब्रह्मा, विष्णु, महेश, ध्येय, धाता है

प्रभु, तेरा पुण्य, प्रताप दुःख हरता है
सुषमा, समृद्धि, सुख की वर्षा करता है
जो भक्ति-भाव से तेरे गुण गाता है
वह बड़भागी भव-सागर तर जाता है

हे परम प्रभो, शुभ समय दिखाया है यह
तेरी करुणा से अवसर आया है यह
उठ रहीं हर्ष की लहरें मन-मानस में
सब इष्ट-मित्र पग रहे प्रेम के रस में

वैदिक विधि से व्रत धार वचन में मन में
बँध गये आज दो व्यक्ति प्रणय-बन्धन में
हे अग्निदेव, तेजस्वी इन्हें बनाना
तम तोम मिटा कर, शुभ सन्मार्ग सुझाना

नव दम्पति स्वागत है गृहस्थ में आओ
हो सुख-समृद्धि-सम्पन्न, विनय सरसाओ
अन गृही सदा सद्धर्म्म निभाना होगा
कर दान-पुण्य नित सुयश कमाना होगा

स्वाध्याय और सत्संग सदा निश्छल हो
हो सदाचार पर प्यार सत्य का बल हो
मानवता का आदर्श बसे जीवन में
सौजन्य, शुद्धता रहे, वचन, तन, मन में

सद्भावयुक्त हो, धर्म्म-कमाई धन की
मन में न समाएं बातें ओछेपन की
दुखियों के दुःख-निवारण में चित देना
सब भाँति सहायक हो, शुभ आशिष लेना

सत् पुरुषों का नित उपदेशामृत पीना
है सार सत्य पर मरना-मिटना, जीना
जो मानवता-पोषक सन्मार्ग-सहारा
हो वह तुम दोनों को प्राणों से प्यारा

शुभ सत्य, धर्म्म-पालन में कमी न करना
यम-नियम, शील-संयम जीवन में भरना
बन देशभक्त वर वीर भाव दरसाना
हो शुचि स्वतन्त्र सद उद्यम को अपनाना

कैसा ही संकट पड़े न पीठ दिखाना
सुख-सम्पति में मदमत्त न हो गरबाना
सत् स्वाभिमान से मस्तक ऊंचा रखना
हो शान्त सदा निज पौरुष का फल चखना

प्रिय पुत्र, सदा तुम धर्म्म-भाव अपनाना
इस परणीता पत्नी को पा सुख पाना
है इसका सारा भार तुम्हारे ऊपर
विचरो पति-पत्नी-रूप प्रेम से भू पर

जिस गृह-कुटुम्ब में नारि सुखी रहती है
उसमें सदैव सुख की सरिता बहती है
जो पत्नी को विलास-साधन कहते हैं
वे मूढ़ भावना से प्रेरित रहते हैं

है मित्र-सहायक अर्द्धाङ्गिनी तुम्हारी
तुम 'प्राणनाथ' हो, यह प्राणों की प्यारी
तुम पुण्य-दान दोनों मिल-जुल कर करना
कर्त्तव्य-क्षेत्र में बन निर्भीक विचरना

हे वधू, तुम्हारा शुभ सौभाग्य अचल हो
जब तक गंगा-यमुना में बहता जल हो
तुम हो गृहस्थ की ज्योति स्वधर्म्म निभाना
अति भक्ति-भाव से प्रिय पति को अपनाना

जब पतिव्रत-पालन में बाधा आती है
तब अबला सती सिंहनी बन जाती है
तुम वधू कहीं यह मन्त्र भूल मत जाना
सर्वस्व होम कर भी कुल-कानि बचाना

व्यवहार, वेश, जीवन में, रहन-सहन में
हो सदा सादगी रमी तुम्हारे मन में
तुम रहो सत्य में लीन, दूर दूषण हों
ऋजुता, मृदुता गुण-पुंज, भव्य भूषण हों

तुमको अब एक नया परिवार मिला है
हिय-कुमुद तुम्हें पा जिसका आज खिला है
हैं; श्वशुर, जेठ, देवर सब ही व्रत-साधक
मानवता के सद्भक्त, ईश-आराधक

सासों, ननदों, जिठानियों को सुख देना
करके सब को सन्तुष्ट, सदा यश लेना
व्यवहार-कुशलता से गृहस्थ अपनाना
होकर प्रसन्न तुम निज कर्त्तव्य निभाना

तुम घर-गृहस्थ को स्वर्ग-समान बनाना
हों सब प्रसन्न-सन्तुष्ट, सुनीति निभाना
महिलाओं का आदर्श भूल मत जाना
प्राचीन आर्य्य-गौरव के ही गुण गाना

बनकर चिरायु भोगो सुख वरना-वरनी
हो सदा सुयश-सम्पन्न धर्म्म-मय धरणी
तुम अचल भाव से निश्चित विधि पर चलना
दूधों न्हाना : पूतों से दोनों फलना

'ग्राम'—'घोष'

'ग्रामों' में कृषकों की बस्ती बसती थीं
'घोषों' में ग्वाल और गायें रहती थीं
पट, अन्न, तेल, तिल, तूल 'ग्राम' देते थे
घृत, दुग्ध, छाछ, दधि 'घोषों' से लेते थे

सब ग्रामों में सहयोग, सुमति-समता थी
सर्वत्र शान्ति-सुख-स्नेह-भयी ममता थी
सत्याग्रह नैतिक बल था जन-जीवन में
था भरा अहिंसाभाव वचन में; मन में

ग्रामों के युवक ग्राम-रक्षा में रत थे
संगठित, सुदृढ़, सन्नद्ध, सुबुध, संयत थे
सबको जन-सेवा की लौ-लगन लगी थी
नागरिक भावना, शुचिता प्रेम-पगी थीं

वे अस्त्र-शस्त्र विद्या में पारंगत थे
नय-न्याय-निष्ठ, ऋजु राजनीति में रत थे
गुरुकुल में पढ़ शिक्षा-दीक्षा पाते थे
तज विषय, विषमता समता अपनाते थे

जब गुरु या अतिथि किसी गृह में जाता था
सबकी श्रद्धा का भाजन बन जाता था
पानी के बदले दूध दिया जाता था
तन, मन, धन से सत्कार किया जाता था

जो बहुजन का कल्याण कभी कर पाते
तो वे अपना जीवन ही विमल बनाते
उनकी यह छोटी सेवा भी गुरुतर थी
पुर, नगर, समाज सभी को श्रेयस्कर थी

बढ़कर न सत्य से पुण्य कर्म जाना था
अघमय असत्य ही महा पाप माना था
अतएव सत्य का ही सबको तब बल था
बस सत्य-रूप भगवान् सबल संबल था

निर्भय होकर सब सत्य बात कहते थे
अन्याय न करते थे, न उसे सहते थे
वे सत्य बोलने में रस-धार बहाते
कटुता-कुटकी सत् मिसरी में न मिलाते

धन-हानि न कुछ भी क्षति समझी जाती थी
हां, स्वास्थ्य-हानि कुछ चिन्ता उपजाती थी
चारित्र्य-हानि सर्वस्व-नाश करती थी
मानव में पशुता कूट-कूट भरती थी

भय, चिन्ता, ईर्ष्या-द्वेष निराशा लाना
था पावन मन-मन्दिर अपवित्र बनाना
मन शुभ संकल्प-समन्वित शुचिता मय थे
निश्चिन्त, सदाशापूर्ण, निष्ठ, निर्भय थे

जन-जन को समता-ममता मन भाई थी
अस्पृश्य भावना पास नहीं आई थी
सब ही सहयोग-नीति के निर्वाहक थे
वे एक-दूसरे की उन्नति-चाहक थे

नीरोग, स्वस्थ, सुन्दर, श्रम-साधक तन थे
शुचि, सत्य, शुद्ध, संकल्प युक्त शुभ मन थे
गोवंश, वनज, वन, खनि, कृषि, सद् साधन थे
था न्यायनिष्ठ व्यवहार सफल जीवन थे

'पुरपति' पुर-सेवक सच्चा हित-साधक था
वह दुश्चरित्र, दुर्गुण-गण का बाधक था
धर्म्मज्ञ पुरोहित धर्म्म भाव भरते थे
सब पुण्यशील थे : पापों से डरते थे

थे पंच निपट निष्पक्ष न्याय-निर्णायक
कटुता-कुनीति के शत्रु; सुनीति सर्स्मयक
सबके विश्वास-पात्र : श्रद्धा-भाजन थे
निर्वाचित होते, तब ऐसे ही जन थे

ग्रामों में था सहयोग-संघटन का बल
जीवन थे सबके प्रेमपूर्ण, अति निश्छल
दुख-सुख सब मिल-जुल कर भोगा करते थे
निज स्वार्थ-सिद्धि के हेतु नहीं मरते थे

कुप्रथाओं में बरबाद न धन होता था
विषयों में लिप्त न तब तन-मन होता था
मितव्ययी, सादगी-प्रेमी थे नर-नारी
लदता था उन पर ऋण का भार न भारी

ग्रामों में व्यर्थ विवाद न होते थे तब
झगड़े-झंझट में काल न खोते थे तब
सबका निर्णय पंचायत कर देती थीं
सद्भाव-स्नेह जनता में भर देती थीं

थे शिक्षित और संस्कृत ग्राम-निवासी
आशा से भरे हृदय पूरे विश्वासी
सात्विक जीवन था, कृषक-कर्म्म करते थे
था सत्ययुक्त व्यवहार, धर्म्म धरते थे

ग्रामों में सुन्दर स्वास्थ्य मुसकराता था
पौरुष, आमोद-प्रमोद, प्रेम भाता था
यौवन-सरिता शुचिता से इठलाती थी
कल्याण-हेतु बढ़ती-चढ़ती जाती थी

प्रायः थे सभी स्वयम् सेवक नर-नारी
अपने शरीर के संरक्षक-हितकारी
छोटे-से-छोटा काम स्वयम् करते थे
यानी कपड़े धोते; पानी भरते थे

पुरुषार्थ, परिश्रम से जो मिल जाता था
उससे ही जन सन्तोष सदा पाता था
व्यवसाय, शिल्प, व्यापार, सत्य-साधक थे
छल-छद्म, प्रपंच, असत्य न तब बाधक थे

तन, वसन स्वच्छ थे, स्वच्छ नगर, पुर घर थे
व्यवहार शुद्ध-सुन्दर भीतर-बाहर थे
मन, वचन, कर्म्म तीनों में शुभ समता थी
शुचिता थी; जीवन शुद्ध, सत्य-ममता थी

श्रद्धा-सत्कार-विहीन न कोई घर था
विद्वान्, अतिथि, ऋषि-मुनियों का आदर था
दधि-मन्थन का उद्घोष नित्य होता था
आगत सन्तों के चरण गृही धोता था

सब शौचों में बस अर्थ-शौच उत्तम था
जो अर्थ-विशुद्ध नहीं, वह व्यक्ति अधम था
सर्वदा धर्म्म से अर्थ कमाते थे तब
वंचकता के व्यापार न भाते थे तब

धृति, क्षमा, शौच, सन्तोष, सत्य अपनाया
इन्द्रिय-निग्रह, अक्रोध-भाव तब भाया
दम, धी, विद्या की ज्योति जगी जन-जन में
रस गया अहिंसा-धर्म्म-मर्म्म जीवन में

सौ वर्ष कर्म्म करते-करते जीते थे
होकर अदीन नित सत्यामृत पीते थे
मिल कर चलते : मिल कर बातें करते थे
हिल-मिल कर ही दुखियों के दुख हरते थे

मणि से भूषित भी विषधर ज्यों मारक है
शिक्षित दुर्जन भी त्यों ही संहारक है
दोनों से बचते कभी न पतियाते थे
मणि या शिक्षा की ओर नहीं जाते थे

दुष्कर्मों से नित दूर रहे नर-नारी
शुभ कर्मों के साधक स्वधर्म्म-अधिकारी
उनके मन में मालिन्य नहीं आता था
सर्वदा प्रेममय, पुण्य-भाव भाता था

सब अर्थ-काम धर्मानुसार करते थे
मन में उच्छृङ्खल भाव नहीं भरते थे
जिससे स्वरूप की रक्षा हो पाती थी
वह वर विधि ही नित-प्रति वरती जाती थी

दारिद्र्य महत्त्वाकांक्षा का मारक है
आशा-लतिका का शोषक-संहारक है
यह जान धर्म्म से धन संचय करते थे
दुष्कर्म कमाई से सब भय करते थे

सब कलाकार निज कौशल दिखलाते थे
व्यवसायी जन वर्गों में बस जाते थे
जो जिस उद्यम-धन्धे को अपनाता था
वह उसी वर्ग का व्यक्ति कहा जाता था

सर्वत्र स्वच्छता शुचिता दिखलाती थी
कूड़ा सड़-गड़ दुर्गन्ध नहीं आती थी
सब लोग स्वास्थ्य-रक्षा में रत रहते थे
रोगों का प्रबल प्रहार न तब सहते थे

नगरों में जनता का बसाव सुन्दर था
सब सुविधाओं से युक्त बना हर घर था
थे पृथक्-पृथक् गृह चिपटे-सटे नहीं थे
विस्तृत आँगन थे, नीचे पटे नहीं थे

मच्छर, मक्खी, डाँसों का ह्रास हुआ था
सर्वत्र स्वच्छता का सुप्रकाश हुआ था
तरु, गुल्म-लताओं से मण्डित आँगन थे
अति हृष्ट-पुष्ट, सन्तुष्ट सदा तन-मन थे

फुलवारी ने घर-घर में छवि छाई थी
तुलसी, अशोक की गुण-गरिमा गाई थी
प्रत्येक कार्य के लिये भवन निश्चित था
उन्मुक्त वायु बहता; प्रकाश-पूरित था

उज्ज्वल प्रकाश से घर जगमग रहता था
सुखमय सुरभित समीर दश-दिश बहता था
सब लोग परिश्रम नित-नियमित करते थे
भण्डार देश का रत्नों से भरते थे

निज श्रम का फल नित श्रमिक वर्ग पाता था
पूँजीपतियों का दल न छीन खाता था
शोषण के तब दुर्भाव नहीं थे मन में
पोषण-प्रियता की नीति रही जीवन में

तब स्वावलम्ब का भाव जगा घर-घर था
कोई न दूसरे पर रहता निर्भर था
पैदा कर अन्न, कपास-ईख उपजाते
यों भोजन-वस्त्र यथेष्ट सदा वे पाते

प्रायः प्रत्येक गृहस्थ रूई धुनता था
घर कात-कात कर सूत वस्त्र बुनता था
कवि, पण्डित, नर-नारी कपड़े सीते थे
सब स्वावलम्ब के बल पर ही जीते थे

सम्पत्ति-स्वास्थ्य को सदा झींखते रहते
जो हो हताश निज कष्ट-कथा नित कहते
वे साहसहीन सफल कब हो सकते थे
केवल प्रमाद के अंकुर बो सकते थे

कर घोर परिश्रम भी न कभी घबराते
जीवन को सब विधि सरस-सजीव बनाते
उनको संसार दुःख-आगार नहीं था
हँस-मुख थे तब सब जीवन भार नहीं था

विद्वान्, वीर, धनवान, सुविज्ञ, घनेरे
कवि, कलाकार, कृषिकार, गुणी बहुतेरे
मानवता के कारण पूजे जाते थे
मानवताहीन न वे आदर पाते थे

ऋषि-मुनियों के आश्रम नगरों से बाहर
एकान्त-शान्त थे सर-सरिता के तट पर
वन-विभुता मन में महा मोद भरती थी
नैसर्गिक सुषमा आधि-व्याधि हरती थी

थे मन-विनोद के लिये विविध आयोजन
जिनसे होते थे, हृष्ट-पुष्ट तब तन-मन
सब शिष्ट, सरल विधियाँ थीं अति सुखदायक
गृह-पालित पशु-पक्षी थे मोद-विधायक

तब विषय-विलास, व्यसन बिलकुल वर्जित थे
आमोद, प्रमोद, मनोरंजन सीमित थे
जनता न अन्धविश्वासों पर अड़ती थी
भ्रम-भ्रान्ति-भावना में न कभी पड़ती थी

सर-सरिताओं में जल-विहार होता था
नौका-नर्तन से सुख अपार होता था
पुर नर-नारी मिल ज्ञान-गोष्ठि करते थे
आनन्द-मग्न होकर जल में तरते थे

सब पुरुष मल्ल-विद्या में पारंगत थे
महिलाओं के व्यायाम अलग निश्चित थे
आखेट, धनुर्विद्या में रत नर-नारी
सब स्वास्थ्य-शौर्य-सम्पन्न, विपुल बल धारी

बहु-विध विकास के लिये प्रचुर साधन थे
उत्कृष्ट शिष्ट महिलाओं के जीवन थे
सन्तरण, नृत्य, कौतुक-क्रीड़ा करती थीं
हो स्वस्थ सतर्क मोद मन में भरती थीं

कन्दुक-क्रीड़ा, वन-क्रीड़ा, वीटा क्रीड़ा
नौ-क्रीड़ा, काव्य-विनोद, नाट्य, घट-क्रीड़ा
मृगया, निलयन, मर्कट-क्रीड़ा प्रचलित थी
थे अगणित क्रीड़ा-क्षेत्र न गति सीमित थी

कुश, क्रीडा शैल, वंश-नर्तन, तृण-छाया
गज-क्रीड़ा, वृक्षारोहण, गण, मृग-माया
इन खेलों में नर-नारी रस लेते थे
शिशुओं को भी उनसे शिक्षा देते थे

रथ, अश्वारोहण, गुप्त मणिक, शर-चालन
व्यायाम, मल्ल-विद्या, पादप-परिपालन
कर गदा-युद्ध निज बल-वैभव दरसाना
था शारीरिक शिक्षा का पाठ पढ़ाना

कुछ खेल स्वयम् अपना विनोद करते थे
कुछ दर्शक-दल में कौतूहल भरते थे
कुछ खेल उत्सवों पर ही हो पाते थे
कुछ स्वास्थ्य-लाभ के लिये किये जाते थे

शुभ अभिनय से शिक्षा समाज पाता था
अधिकाधिक श्रेय मार्ग को अपनाता था
समता, क्षमता, शुचिता, ऋजुता संवर्तक
थे दृश्य सभी सुखमय सद्भाव प्रवर्त्तक

नर-नारि उच्च कुल के अभिनय करते थे
बन पात्र-पात्री दिव्य-रूप धरते थे
सब हिल-मिल कर नित नव रस बरसाते थे
सुन्दर, स्वर्गीय, दृश्य वे दिखलाते थे

कृषि-शिल्प-प्रदर्शनियाँ भी की जाती थीं
जिनमें विस्मय की विविध वस्तु आती थीं
पटु कलाकार निज कौशल दिखलाते थे
उपहार, पारितोषिक, पदवी पाते थे

नाटक-शाला, विद्यालय-भवन बनाये,
पंचायतघर में सब विवाद निबटाये
ग्रामों में पंचों का चुनाव होता था
उनके प्रति सबका स्नेह-भाव होता था

तब इन्द्र-ध्वजा-उत्तोलन सब करते थे
यों देश-प्रेम या धर्म्म-भाव भरते थे
यह कार्य सविधि सम्पन्न किया जाता था
शुभ समारोह का रूप दिया जाता था

त्योहारों को सानन्द मनाते थे सब
तज भेद-भाव सब हिल-मिल जाते थे तब
सारा समाज परिवार-रूप बनता था
सद्भाव-स्नेह का वर वितान तनता था

स्वाधीन भाव से उत्सव-पर्व मनाते
निज धर्म्म-कर्म्म अति श्रद्धा से अपनाते
कोई न किसी विधि भी बाधक होता था
तब एक दूसरे का साधक होता था

उत्सव-पर्व्वों पर नगर सजा करते थे
जन-जन के हिय में हर्ष-मोद भरते थे
उत्साह-प्रेम का उदधि उमड़ आता था
प्रत्येक पर्व्व सन्देश नया लाता था

उत्सव-मेलों पर भीड़ जमा होती थी
सुन सन्तों के वर वचन मोह खोती थी
अवसर से समुचित लाभ उठाते थे तब
जनगण न पर्व को व्यर्थ बिताते थे तब

थे शिष्ट जुलूस शान्तिमय, मंगलकारी
हाथी, घोड़े, रथ, यान सैन्य-बल-धारी
जन-सागर भूतल पर उलास लेता था
उत्साह, उज्ज्वलता का परिचय देता था

सामूहिक भोज सदैव दिये जाते थे
जिनमें बहु-संख्यक जन आते-खाते थे
केले, पत्तल, सोने-मिट्टी के वासन
थे चौकी, पट्टे, टाट, चटाई, आसन

थे सूपकार पकान्न-शास्त्र के ज्ञाता
षट् रस छत्तीस व्यंजनों के निर्माता
नित भक्ष्य, भोज्य, रस, लेह्य, चोष्य भोजन थे
खा-पी होते तन पुष्ट और मुद मन थे

मोदक, मिष्टान्न, कृशर, संयाव, सु-पायस
हविष्यान्न, क्षीर, दधि, पय, पूप, अमृत रस
फल, फल-रस, फली, शाक-भाजी, तरकारी
थे सब पदार्थ भोजन में नित हितकारी

उत्सव-मेलों में समता सरसाते थे
थे शान्त, न घबराते या भय खाते थे
नागरिक व्यवस्था भंग न की जाती थी
नैतिकता ही सब सुविधा पहुँचाती थी

भीड़ों में शान्त भाव से आगे बढ़ते
यानों में क्रमशः सभी उतरते-चढ़ते
बालक-महिलाओं को आगे लेते थे
रोगी-निबलों को सब सुविधा देते थे

दीपावलि 'दीप-वृक्ष' सबको भाते थे
उज्ज्वल प्रकाश से नगर जगमगाते थे
सर्वत्र रात में दिन-सा दरसाता था
कोई कुत्सित व्यापार न कर पाता था

होते थे वर व्यायाम खेल करते थे
आबाल वृद्ध तज भेद मेल करते थे
नारियाँ शुद्ध, सुन्दर गाने गाती थीं
भोजन स्वादिष्ट खिलाती थीं—खाती थीं

पद, भजन, गीत जब तन्मय हो गाते थे
तो भव्य भाव जीवन में भर जाते थे
संगीत शक्ति ने ज्ञान-ध्यान उमगाया
आनन्द-मेघ बरसाया : गौरव गाया

मल्लों के युद्ध देह-बल दरसाते थे
वे दाव-पेच की विधियाँ बतलाते थे
शारीरिक-दृढ़ता मुख्य कर्म्म माना था
आरोग्य, धर्म्म का मूल तत्त्व जाना था

सामाजिक जीवन

सब ने इस शुभ युग में विकास पाया था
मानो शासन-ऋतुराज वहाँ आया था
थी सुख-समृद्धि की वृद्धि न निर्धनता थी
दूधों न्हा पूतों फली आर्य्य जनता थी

वह युग था धन्य-अनन्य, पुण्य प्रभु प्रेरा
था नैतिकता का नृत्य : सुकृत्य घनेरा
सर्वदा शान्ति सुख की वर्षा होती थी
सब थे धर्मज्ञ, ज्ञान-चर्चा होती थी

सुख-शान्ति-सुधा-रस राष्ट्र-पान करता था
ज्ञानी-गुणियों का देश मान करता था
विद्वत्समाज वर ज्ञान-दान करता था
जग रामचन्द्र का कीर्ति-गान करता था

सर्वत्र-सर्वदा प्रभु-सत्ता जानी थी
उस परम तत्त्व की ही महिमा मानी थी
प्रभु सत्कर्मों में शक्तिदान देता था
वह दान-पुण्य में भक्ति-ज्ञान देता था

निर्भ्रान्त भाव से ईश्वर को भजते थे
परिणाम-रूप दुष्कर्म सभी तजते थे
हृदयों में सदा सत्य-धारा बहती थी
श्रद्धा-विवेक में शुचि समता रहती थी

परमात्म-प्रार्थना तन्मय हो करते थे
प्रभु-भक्ति-सुधा मन-मानस में भरते थे
सब के विचार प्रभु से ही सम्बन्धित थे
सब कर्मों में प्रभु के संकेत निहित थे

वेदज्ञ-वृन्द जब साम-गान करता था
तब आधि, व्याधि, सन्ताप, पाप हरता था
स्वर-स्वर में, शब्द-शब्द में जीवन-बल था
उस नाद तत्त्व में पुण्य प्रभाव प्रबल था

मानवता सर्वोपरि समझी जाती थी
वह बन्धु भाव, शुचिता, समता लाती थी
मस्तिष्क-हृदय जब दोनों मिल जाते थे
तो मानवता की ज्योति जगमगाते थे

कर-कर कर्त्तव्य कर्म्म चिरजीवी होते
पुरुषार्थहीन हो जीवन-जन्म न खोते
पौरुष-पूषण की ज्योति जगी जन-जन में
सर्वथा सफलता-सुषमा थी जीवन में

जीते परहित के हेतु सत्य पर मरते
आदर्श सुरक्षित रहे, वही विधि करते
वे प्रण पर अड़ते; दृढ़ता सदा दिखाते
उद्देश्यों से विचलित न कभी हो पाते

वैयक्तिक जीवन ही समाज-साधक था
प्रत्येक व्यक्ति शुभ शुचिता आराधक था
परिवार, नगर, पुर सदाचार सरसाते
फिर दुराचार-दुर्भाव कहाँ से आते

तन-मन की शुचिता ही जनता का व्रत था
सादगी, सरलता थी, जीवन संयत था
आडम्बर-प्रियता पर न प्राण देते थे
कलुषित कृत्रिमता को न मान देते थे

सुख-दुख में जन ध्रुव धैर्य नहीं खोते थे
जीवन या मरण समान उन्हें होते थे
वे मृत्युञ्जय थे अजर-अमर पद-धारी
थे बहु संख्यक संसिद्ध स्वर्ग-अधिकारी

स्तुति कन्या अविवाहित कहलाती थी
वह निज अनुरूप न समुचित वर पाती थी
जिस वर को चाहा उसने उसे न चाहा
जिसने वह चाही उसने उसे न ब्याहा

नर-नारी की सुख्याति भव्य भूषण था
कुख्याति, कलङ्क, कलुष, दुर्गुण दूषण था
केवल धन-सम्पति से न सुयश पाते थे
सद्गुण गण कीर्ति-प्रतिष्ठा दिलवाते थे

ज्यों थोड़ा भी विष पय दूषित करता है
त्यों अल्प झूठ भी मानवता हरता है
अतएव न मिथ्याचार कभी होता था
विधि के विरुद्ध व्यवहार न तब होता था

मृदु वाणी से सारा समाज भूषित था
कटु भाषी मानव का जीवन दूषित था
जैसे थे शुद्ध हृदय वैसी वाणी थी
शुचिता, सत्प्रेम प्रदर्शक, कल्याणी थी

जिस भाँति सफल हो तरुवर झुक जाते हैं
पानी से भरे मेघ नीचे आते हैं
उस भाँति लोग जब, बल-वैभव पाते थे
तो वृक्ष वादलोंवत् ही नव जाते थे

सज्जन चाहे सन्ताप-कष्ट पाते थे
पर सज्जनता में भेद नहीं लाते थे
चन्दन, घनसार अग्नि में झुक जाते हैं
पर सुखद सुगन्ध अन्त तक पहुँचाते हैं

धरती पर पड़ते, चाहे शैया पाते
भखते पत्ते, चाहे फल-मोदक खाते
चिथड़े लपेटते या सुवस्त्र अपनाते
पर, दुख-सुख वे मन में न नेक भी लाते

निन्दा होती या होती बड़ी बड़ाई
मिलता धन-कोष, न मिलती चाहे पाई
तत् क्षण मर जाते या चिर जीवन पाते
पर न्याय-मार्ग से पीछे पग न हटाते

चाहे पश्चिम में सूर्य्य उदय हो जाता
होता चल अचल, चन्द्र पावक बरसाता
चाहे पर्वत की शिला कमल विकसाती
पर सज्जन की वाणी न पलटने पाती

कट, पिट, घिस कर जब स्वर्ण तपाया जाता
तब शुद्ध समझ उसको अपनाया जाता
गुण, कर्म्म, त्याग, तप पर जब कस जाता था
तो मानव सत्य-स्वरूप दृष्टि आता था

जीने की लिप्सा थी न मृत्यु का भय था
यश हो न कलङ्कित अङ्कित भाव हृदय था
निर्दोष जन्म-जीवन से हर्षाते थे
वे पुत्र-जन्म का-सा ही सुख पाते थे

मन ही था मानव मुक्ति-बन्ध का दाता
मन ही मानव-दानव का था निर्माता
निर्विषय भावना मुक्ति-मार्ग पर लाती
पर, विषय-वासना बन्धन में बँधवाती

सत्याग्रह पर सर्वस्व समर्पित करते
सब सत्य-धर्म्म-रक्षा-हित जीते-मरते
मिथ्या पर कोई कभी न हठ करता था
जन-जन जनता में सत्य भाव भरता था

पढ़ काव्य-शास्त्र नित ज्ञानी काल बिताते
फँस व्यसन, कलह, निद्रा में जड़ मर जाते
था सद्विवेक ही साधु जनों का संबल
आचारयुक्त जीवन था त्याग-तपोबल

सब स्वावलम्ब की मूर्ति; न पर-निर्भर थे
वे कर्म्मवीर, पुरुषार्थ-प्रेम-सागर थे
आशा-प्रकाश से भरे हुए सब मन थे
सब स्वस्थ शरीर और उज्ज्वल जीवन थे

सागर, नद-नदी न निज पानी पीते हैं
पादप अपने फल खाकर कब जीते हैं
बादल उपजाते अन्न, न खुद खाते हैं
सज्जन भी सब कुछ पर-हित दे जाते हैं

घन-गर्जन सुन ज्यों सिंह नाद करता है
स्यारों के रोदन पर न कान धरता है
त्यों क्षुद्र जल्पना को न मान देते थे
गुरुतर विषयों पर पूर्ण ध्यान देते थे

उद्योगी पुरुष सदा लक्ष्मी पाते थे
रो-रो कर भाग्य, भीरु जन मर जाते थे
पौरुष-प्रयत्न कर यदि न सफल होते थे
तो झीख-झींख वे काल नहीं खोते थे

तब अजर-अमरवत् विद्या-वित्त कमाते
करते सत्संग सदुद्यम-श्रम अपनाते
सब मृत्यु शीश पर जान धर्म्म करते थे
सर्वदा सत्य-अनुकूल कर्म्म करते थे

संरक्षित धर्म्म सदा रक्षा करता था
पर, धर्म्म-विघातक जीता ही मरता था
प्रिय पुण्य जीवनाधार : पाप मारक था
था पाप नरक का द्वार : पुण्य तारक था

यश-रूप देह पर कभी न दूषण आता
चाहे भौतिक शरीर रहता—मिट जाता
इस धर्म्म-ज्योति से जन-मन आलोकित थे
ये परं तत्त्व व्यापक थे, विश्व विदित थे

विद्या विवाद से मुक्त ज्ञान देती थी
सम्पति मद से रह दूर दान देती थी
तव शक्ति न पर-पीड़न करने पाती थी
कल्याण, त्राण, सुख-साधन बन जाती थी

जिसका अन्तरतम शुद्ध भाव भूषित है
उसके बाहर का जीवन कब दूषित है
ऐसे भावों का पुण्य प्रकाश हुआ था
सद्गुण गण का तब विमल विकास हुआ था

तृष्णा-तरुणी का भाव न तब भाता था
कोई न परिग्रह-संग्रह कर पाता था
लिप्सा का था अति लोप त्यागमय गति थी
थे कर्म्मवीर सब लोग धर्म्म में मति थी

कर्त्तव्य-मार्ग में मरना ही जीवन था
अपमानसहित जीना भी महा मरण था
कुल, देश, जाति की कीर्ति बढ़ाते थे तब
बलि-वेदी पर निज शीश चढ़ाते थे तब

सब कर्म्म व्यवस्थित, नियमित नित होते थे
दृढ़ रहते थे तब, धैर्य नहीं खोते थे
अविवेकपूर्ण पद्धति का मान नहीं था
निज करणी का होता यश-गान नहीं था

संघर्ष और असफलता बल देते थे
सूखी आशा-लतिका में जल देते थे
पौरुष से सफल मनोरथ सब होते थे
तब 'भाग्य-भाग्य' कह कर न कभी रोते थे

सच्ची सुख-शान्ति हृदय में ही मिलती थी
जब परम तत्त्व की कल कलिका खिलती थी
बाहर न शान्ति के लिये भटकते थे तब
भ्रम-भ्रान्ति-रूप रोड़े न अटकते थे तब

श्रद्धा से सबको ऋद्धि प्राप्त होती थी
श्रद्धा से सबको सिद्धि प्राप्त होती थी
श्रद्धाधारी जन सब कुछ कर जाते थे
श्रद्धा से भवसागर तक तर जाते थे

फव्वारे ने सिर उठा घमण्ड दिखाया
क्षण में ही गिर सिर के बल नीचे आया
पर धूल नम्रता-पाठ नित्य पढ़ती है
धरती से उठ ऊँची नभ में चढ़ती है

कोल्हू में पिल गन्ना मिठास देता है
कट-छट, घिस-पिस चन्दन सुवास देता है
वैसे ही शिष्ट जनों पर दुख आते थे
तो वे न कभी सद्गुण-गण विसराते थे

जीने-मरने का हर्ष-विषाद नहीं था
कर्त्तव्य कर्म्म में रंच प्रमाद नहीं था
प्रण-पालन में प्राणों का मोह नहीं था
परिवार, इष्ट-मित्रों का छोह नहीं था

•

चारित्र्य हृदय का दीपक कहलाता था
जो अन्धकार में किरणें छितराता था
सन्मार्ग-प्रदर्शन ज्ञान-ज्योति करती थी
देकर प्रकाश अज्ञान-तिमिर हरती थी

सुख-दुख या मित्र-शत्रु में समता रखना
निजता-परता में कभी न समता रखना
यश-अयश मृत्यु-जीवन का भेद न भाया
थी अनासक्ति की छायी सब पर छाया

मिथ्या विचार आधार न थे जीवन के
भ्रम-भ्रान्ति-युक्त व्यवहार न थे जीवन के
पाखण्डपूर्ण आचार नहीं होता था
वंचकता का व्यापार नहीं होता था

निर्बलता कायरता का नाम नहीं था
दुर्भाव, दम्भ, छल-बल का काम नहीं था
अन्याय और अत्याचारों की माया
कलुषित करती थी तब न देश की काया

लौकिक विजयों का अधिक महत्त्व नहीं था
भौतिक जीवन में भी कुछ तत्त्व नहीं था
अध्यात्म-सफलता में सब सुख पाते थे
जीवन का लक्ष्य इसी विधि अपनाते थे

विप्लव, विनाश में जीवन-ज्योति जगी थी
नैराश्य-निशा में आशा-लगन लगी थी
जो ध्वस्तों में भी अस्ति-भाव भरती है
वह अमर शक्ति कल्याण सदा करती है

शुभ धर्म्म-कर्म्म द्वारा स्वरूप बनता था
जीवन पर शुचिता का वितान तनता था
सब निज स्वरूप-अनुरूप कर्म्म करते थे
विपरीत भाव अपनाने से डरते थे

तब अर्थ-काम-साधन में धर्म्म प्रबल था
अतएव सभी का जीवन शुचि, निश्छल था
प्रण रहे, अर्थ या काम नष्ट हो जाए
ये भव्य भाव ही जन-जन ने अपनाए

अज्ञान दुःख का उत्पादक माना था
पर-पीड़न ही तब घोर पाप जाना था
लौकिक तृष्णा का वेग न बढ़ पाता था
संयत जीवन सुन्दर समझा जाता था

तब सदाचार, नैतिकता का आदर था
सद्भाव, स्नेह, समता-प्रभाव घर-घर था
अभियोग, विवाद, वैर-विष कैसे आता
बन्धुत्व भाव में द्वेष न कहीं समाता

थे सद साहस-सम्पन्न धैर्य ध्रुवधारी
अति दृढ़प्रतिज्ञ निर्भीक सुमंगलकारी
अपनी उद्देश्य-पूर्ति में अड़ जाते थे
हो सफल मनोरथ विजय-शान्ति पाते थे

मन में न हीनता भाव कभी आते थे
उत्साह, ओज नवजीवन उमगाते थे
मरने-जीने की चिन्ता नहीं सताती
कर्त्तव्य कर्म्म में दृढ़ता निश-दिन भाती

अन्तर-बाहर की शुद्धि सभी करते थे
मन, बुद्धि, आत्मा में शुचिता भरते थे
मन सत्य, ज्ञान से बुद्धि-शुद्ध होती थी
विद्या, तप से, आत्मा प्रबुद्ध होती थी

थी विमल बुद्धि सत्यानृत की निर्णायक
जीवन की प्रेरक शुभ सत्कर्म-विधायक
वह धर्म्म, अर्थ सत् काम सिद्ध करती थी
मन में पवित्रता, पुण्य, प्रेम भरती थी

विद्या, विज्ञान, ज्ञान का समुचित संचय
करता था पुण्य प्रकाश, अविद्या-तम क्षय
जीवन में उज्ज्वल ज्योति जगमगाती थी
मानव में मानवता द्युति दमकाती थी

था सत्य महा तप, परम धर्म्म का कारण
होते थे इससे सारे पाप निवारण
शुभ सत्य, ज्ञान का मूल, शान्ति-सुखदाता
सन्मार्ग प्रदर्शक, विजयी, विश्व-विधाता

अस्मिता, अविद्या, अभिनिवेश, छल-छाया—
ये राग-द्वेष से मुक्त, असत्य न भाया
मन में विशुद्ध भावों की ज्योति जगी थी
सद्धर्म्म-कर्म्म की सच्ची लगन लगी थी

मानव-मानव में प्रेम-भाव भरता था
मानव मानव का हित-साधन करता था
यदि मानव पर दुख या संकट पड़ता था
तो मानव रक्षा-हित सदैव अड़ता था

जिस पृथिवी पर मल-मूत्र त्यागते, चलते
कर क्रूर कुदाल-प्रहार, कुचलते-दलते
वह क्षमामयी माता सब सुख पहुँचाती
पट, अन्न, पुष्प, फल देकर हृदय लगाती

थी जननी-जन्मभूमि की बड़ी बड़ाई
वह स्वर्गलोक से भी बढ़ कर बतलाई
सब लोग मातृभू के थे पुण्य पुजारी
कर्म्मिष्ठ, धर्म्म-मर्म्मज्ञ, मुक्ति-अधिकारी

प्रत्येक प्राणि पर प्रेम-भाव दरसाना
सहना दुख, कष्ट न औरों को पहुँचाना
यह चिन्तन ही निशि-वासर सब करते थे
पर-पीड़न से सब लोग सदा डरते थे

काया, वाणी, मन से सब का शुभ साधन
सद्भाव, स्नेह-सेवा, शुचिता, विशुद्ध मन
उद्देश्य-पूर्ति हित कष्ट-आपदा सहना
थी त्रिविध तपस्या : व्रत-संयम से रहना

जिसमें निज मन की तुष्टि, अन्य का हित था
वह कर्म्म-धर्म्म कर्त्तव्य, विधेय विहित था
जिसमें न आत्म-सन्तुष्टि न हित-साधन था
वह कर्म्म अकर्म्म पाप-प्रेरक, बन्धन था

स्वाधीन भावना को सब सुख माना था
परवशता को ही घोर दुःख जाना था
सुख-दुख का लक्षण यही किया जाता था
स्वातन्त्र्य-भाव पर ज़ोर दिया जाता था

आत्मिक उन्नति की ज्योति जगमगाई थी
भौतिक विकास की भी विधि अपनाई थी
दोनों प्रकार थे शान्ति-कान्ति-संचारक
परलोक—लोकहित-प्रेरक पुण्य-प्रसारक

सब सदा लक्ष्य की ओर बढ़े जाते थे
गौरव-गिरि पर निर्भ्रान्त चढ़े जाते थे
निज प्रण-पालन में प्राण अड़ा देते थे
वे सफल मनोरथ होकर दम लेते थे

वे सुख में सुख, दुख में न दुःख पाते थे
उनको न क्रोध, भय, राग कभी भाते थे
भय था न किसी से स्नेह, मोह-ममता थी
शुभ-अशुभ कर्म्म-फल में सदैव समता थी

विघ्नों के पर्वत चूर-चूर करते थे
टूटे हृदयों में साहस-बल भरते थे
आशा का सुन्दर सूर्य उगाते थे वे
सोतों को बाहें पकड़ जगाते थे वे

साहस से भरे हृदय भुजदण्ड फड़कते
वे सत्य, धर्म्म के साधक सदा कड़कते
था दैन्य न उनके पास कर्म्म शुभकारी
थे पौरुष से सम्पन्न वीर व्रत-धारी

मृतकों की भाँति न वे जग में जीते थे
जीवित रह कर, जीवन-अमृत पीते थे
कर्त्तव्य कर्म्म-हित अर्पित तन, मन, धन था
था जीवन धर्म्म-प्रधान, मृत्यु जीवन था

जिससे होता जीवों का सदा भला है
उस जीवन का जीना भी एक कला है
यह जीवन-कला सभी ने अपनाई थी
कर त्राण, लोक-कल्याण कीर्ति पाई थी

'अभ्युदय' और 'निःश्रेयस्' जिससे पाते
जिससे अवनत जीवन ऊँचे उठ जाते
सद्धर्म्म वही मानव का सबल सहारा
था जनता का सर्वस्व प्राण से प्यारा

शुभ संकल्पों की धार बहा करती थी
नय, विनय, स्नेह, सद्भाव-सुधा भरती थी
निष्काम भाव से कर्म्म किया करते थे
सब लोग धर्म्म-हित जीते थे; मरते थे

वे आत्म निरीक्षण कर निज दोष मिटाते
बन शक्त-भक्त सेवा-सरिता में न्हाते
कालुष्य नष्ट कर हृदय पवित्र बनाते
भगवान-भक्ति में जीवन-जन्म बिताते

सब काम कामना के बल पर चलता था
साफल्य, सत्य के साँचे में ढलता था
थे सत्यकाम, शुचिहृदय, सुधी नर-नारी
कर्मण्य, विवेकी, मुक्ति-धाम-अधिकारी

ऋषि-मुनियों की प्रतिभा से जग जगमग था
साहित्य-साधना का सद्भाव सजग था
संस्कृति का सौरभ सदा उड़ा करता था
सद्धर्म्म-मर्म्म नित भव्य भाव भरता था

वे दया धर्म्म का मूल समझने वाले
थे सदा शूल को फूल समझने वाले
अधिकारी का उपकार किया करते थे
उपकारी पर प्रिय प्राण दिया करते थे

वे कभी किसी पर द्वेष न नेक दिखाते
वे प्राणिमात्र पर मित्र-भाव दरसाते
सब के सुमित्र, ऐसी शुभचिन्तक जन थे
वे करुणा-कोष सुशील सत्य जीवन थे

सर्वत्र सत्य का ही भाषण होता था
अघमय असत्य तब पड़ा-पड़ा सोता था
अपने प्रति जो सदैव सच्चे रहते थे
वे कभी झूठ व्यवहार नहीं सहते थे

सब जन थे सुखी, स्वच्छन्द प्रेम-रस पागे
सौभाग्यवान, सम्पन्न, धर्म्म-अनुरागे
दैहिक, दैविक, भौतिक तापों की छाया—
पड़ती थी कहीं न; कंचन थी सब काया

संकल्प शक्ति सब काम सिद्ध करती थी
टूटे हृदयों में बल-साहस भरती थी
जो काम न निर्बलतावश हो पाते थे
वे दृढ़ विचार से पूरे हो जाते थे

संकल्प-शक्ति की जीवन पर प्रभुता थी
सारे समाज में भावों की विभुता थी
मन मुक्ति-बन्ध का हेतु कहा जाता था
वह भवसागर का सेतु कहा जाता था

नागरिक भाव जन-जनता में जगमग था
कर्त्तव्य-ज्ञान सर्वत्र सजीव, सजग था
थीं नगर-पालिका सभा-समिति उपकारी
जन-सेवा में संलग्न सदा हितकारी

थे प्रेम-भाव से भरे सभी नर-नारी
सच्चे नागरिक स्वशासन के अधिकारी
जनता में कलह-विवाद नहीं होता था
सारा समाज सुख नींद सदा सोता था

जिसने जीवन को संयत-नियत बनाया
जिसने मन-इन्द्रिय-निग्रह कर दिखलाया
जो सदाचार-सम्पन्न नगरवासी था
वह गृही विविक्त, विरागी-संन्यासी था

जो यती दिखाने को था कामिनि-त्यागी
पर मन ललना-लोचन का था अनुरागी
जिसके तन, मन में विषय-वासना जागी
वह था न ब्रह्मचारी, विरक्त, संन्यासी

जो ब्रह्मचर्य-व्रत धार ज्ञान-गुण पाते
कर सदाचरण धर्मज्ञ-वीर बन जाते
सद् साधन, शुचिता से धन-धान्य कमाते
वे राम-राज्य की प्यारी प्रजा कहाते

परिवार, पड़ोसी, ग्राम, नगर, पुरवासी
उपप्रान्त, प्रान्त, सीमान्त, प्रदेश प्रवासी
निज देश-विदेश, विश्व-भर में समता थी
था स्नेह सत्य व्यवहार, धर्म्म-ध्रुवता थी

तब उषःकाल से पूर्व जागते थे सब
उठ कर पहले मल-मूत्र त्यागते थे सब
फिर न्हा-धोकर प्रभु-भक्ति लीन हो जाते
कुछ खा-पीकर व्यवसायों में मन लाते

प्रत्येक व्यक्ति सद्गुण-गण से मण्डित था
अतएव समाज सुखी, सुघटित, विधिवित था
सब कर्म्म धर्म्म-अनुसार किये जाते थे
सब को समुचित अधिकार दिये जाते थे

जन-जन में उन्नति की असीम अभिलाषा
मन-मन में संचित निज महत्त्व की आशा
सब लोग नित्य ऊँचे उठते जाते थे
अभिवृद्धि, सिद्धि, पौरुष-प्रसाद पाते थे

सब अपनेपन पर प्यार किया करते थे
मन-जीवन पर अधिकार किया करते थे
सब को स्वदेश-गौरव, स्वधर्म्म प्यारा था
सब ने स्वकीय बल-वैभव विस्तारा था

ब्रह्मचारी, गृही, वनस्थ और संन्यासी
थे रामराज्य में ये चारों अधिवासी
पाखण्डी, धूर्त्त, दस्यु-दल नष्ट हुआ था
कोई न किसी विधि सत्पथ भ्रष्ट हुआ था

विद्वानों का बल सदा मान पाता था
ज्ञानी-गुणियों का मत पूजा जाता था
बहु संख्यक अज्ञों के न हाथ उठते थे
जन रूढ़िवाद की ओर नहीं झुकते थे

श्रम, अध्यवसाय, सफलता के साधक थे
सब कर्म्मवीर सद्गुणगण-आराधक थे
आरम्भ-शूर आदृत न कहीं होते थे
वे उन्नति के पथ में काँटे बोते थे

प्रत्येक व्यक्ति था निज चरित्र-निर्माता
बन अकर्मण्य 'उपदेश' न कभी सुनाता
सब जन अपना-अपना सुधार करते थे
थे ईश-भक्त, दुष्कर्म्मों से डरते थे

संन्यासी, सन्त-साधु, भिक्षुक, उपकारी
ज्ञानी, पण्डित, गुणवन्त, कलाकृति-कारी
सब शुद्ध भाव से जन-सेवा करते थे
सद्धर्म्म धार कर भवसागर तरते थे

उपकारी सन्त चरा-विचरा करते थे
वे प्राणिमात्र के कष्ट-क्लेश हरते थे
थे अति सहिष्णु सुख-दुख समान था उनको
दुख था सुख या अपमान मान्न था उनको

उपदेशक सत् उपदेश-ज्ञान-दाता थे
कर्म्मण्य, धीर, धर्म्मज्ञ, तत्त्व-ज्ञाता थे
वे पुण्य-प्रबोधक थे विशुद्ध आचारी
सबके सच्चे सेवक निरीह हितकारी

उत्साहपूर्ण वर बाहु फड़कते थे तब
वीरत्व भाव भरपूर भड़कते थे तब
थे सभी सत्य के भक्त, न्याय के नायक
खल-दल-संहारक, सुकृती-शिष्ट सहायक

कोई न विलासी धन अपव्यय करता था
बल-वीर्य, धर्म्म-धन, धी-संचय करता था
पर-हित में सब की लगन लगी रहती थी
जन-सेवा की नित ज्योति जगी रहती थी

वे मन के दुष्ट विचारों से लड़ते थे
दुर्गुण-दुर्व्यसनों पर कोड़े जड़ते थे
सामाजिक दोषों के विरुद्ध अड़ते थे
पापी-प्रतारकों के पीछे पड़ते थे

पापी को दे उपदेश सुमार्ग सुझाते
पापों से घिनते पापी से न घिनाते
इस भाँति पतित जीवन भी तर जाते थे
पापी जन भी शुभ करनी कर जाते थे

पापों का ताप न दृष्टि कहीं भी आता
अत्याचारों का नाम नहीं सुन पाता
दुर्जीवी जन मूरत न दिखा सकते थे
दम्भी-दर्पी सम्मान न पा सकते थे

तब निन्दनीय निन्दित हो अकुलाता था
आचारवान के जग गुण-गण गाता था
अधिकारी ही अधिकार उचित पाता था
उद्दण्ड-दुष्ट को दण्ड दिया जाता था

प्रत्येक व्यक्ति निज शक्ति समुन्नत करता
दुर्भाव मेट सद्भाव हृदय में भरता
थे सरल, सौम्य, कर्मिष्ठ, सत्य व्रत-धारी
सब प्राणिमात्र के हित-चिन्तक—हितकारी

कहने से कोई बड़ा नहीं होता था
था वही बड़ा जो सुकृति-बीज बोता था
जो जन-सेवा में जीवन-जन्म बिताता
वह कर्मवीर धर्मज्ञ सदा यश पाता

धन, बल या आयु न गुरता के बोधक थे
थे बड़े वही जो ज्ञान-समुद्बोधक थे
अनुभव, विद्या, आचार जिन्हें भाते थे
वे विज्ञ, वृद्ध या बड़े कहे जाते थे

आविष्कारक को मान-दान मिलता था
मानो इस विधि प्रतिभा-प्रसून खिलता था
जिनमें प्रतिभा की प्रभा दृष्टि आती थी
उनको जन-शासन-सत्ता अपनाती थी

जो सार्वजनिक सेवा में रत रहता था
वह भोजन-छादन का न कष्ट सहता था
जनता उसको आदर दे अपनाती थी
लौकिक चिन्ता-चण्डी न पास आती थी

वह सभा नहीं थी जिसमें वृद्ध नहीं थे
वे वृद्ध नहीं जो धर्म्म-प्रबुद्ध नहीं थे
वह धर्म्म नहीं जिस को न सत्य भाता था
वह सत्य नहीं जिस पर छल छा जाता था

भूकम्प, महामारी, अकाल, जल-प्लावन
इत्यादि संकटों से विमुक्त थे जीवन
यदि कहीं कष्ट का चिह्न दीख पड़ता था
तो सब समाज संरक्षण हित अड़ता था

जो बने विरागी राग नहीं तजते थे
इन्द्रिय-निग्रह कर ईश नहीं भजते थे
वे वन में जाकर भी गृहस्थ-साधक थे
दृढ़ दम्भ दुर्ग : भौतिकता-आराधक थे

सेवक या भृत्यों पर न गृही निर्भर थे
हिल-मिल करते थे काम सभी घर-घर थे
शौचादिक को सब जंगल में जाते थे
मानव 'महतर' 'भंगी' न कहे जाते थे

था यज्ञ प्राणियों का हित-साधन करना
सब का सेवक बन कर सर्वत्र विचरना
जो जन प्रमाद-वश यज्ञ न कर पाते थे
वे भोजन नहीं पाप ही को खाते थे

यज्ञों से वायु विशुद्ध बना करती थी
सुखदा-सुगन्धि से वन-उपवन भरती थी
जो द्रव्य यज्ञ में होम किये जाते थे
वे स्वास्थ्य-सुधा बदले में बरसाते थे

सर्वत्र पूज्यवर ही पूजे जाते थे
जो थे अपूज्य आदर न कहीं पाते थे
सब जन दुष्काल, मृत्यु, भय से रक्षित थे
सब धर्म्मभीरु, सद्भक्त, सुधी, शिक्षित थे

कम-से-कम वस्त्रों का प्रयोग होता था
आडम्बर में कोई न द्रव्य खोता था
सात्विक भावों को ही सब अपनाते थे
भीतर-बाहर से सौम्य दृष्टि आते थे

अक्रोध क्रोध पर सदा विजय पाता था
सज्जनता से दुर्जन जीता जाता था
मन, वचन, कर्म्म मृदुता-मधु बरसाते थे
जीवन में दिव्य प्रकाश-रश्मि लाते थे

निर्बल की क्षमा शक्ति समझी जाती थी
बलवानों की वह भूषण कहलाती थी
सब लोग क्षमा के वशीभूत होते थे
थे क्षमाशील वे क्षमा नहीं खोते थे

तब क्षमावान में क्रोध नहीं रहता था
वह विनय-शान्ति-नद में सदैव बहता, था
उसमें प्रतिहिंसा-भाव नहीं आता था
वह क्षमामूर्ति बन सब कुछ सह जाता था

ऐसे सद्भाव भरे थे जन-जीवन में
पर-हित ही था शुभ लक्ष्य सभी के मन में
'उपकार' सम्पदाओं से घर भरता था
आपत्ति-विपत्ति, दैन्य-दुर्गति हरता था

इस भाँति समाज सर्व सेवा में रत था
सब का हित-साधन ही जीवन वर-व्रत था
तब स्वार्थ-सिद्धि में लिप्त नहीं रहते थे
निजता में ही विक्षिप्त नहीं रहते थे

जो शिशुओं में दुर्भाव-दम्भ भरते थे
जो अज्ञों को पथ-भ्रष्ट—नष्ट करते थे
वे नर नारकी कठोर दण्ड पाते थे
निज करणी पर रोते थे—पछताते थे

दक्षिणा, दान, वेतन निश्चित पाते थे
वे नियत समय पर सबको मिल जाते थे
मासिक, वार्षिक वृत्तियाँ दान देते थे
जिनको अधिकारी ही सदैव लेते थे

जो दलबन्दी से दूर सत्य-पालक थे
सद्धर्म्म भाव-भरपूर कुमति-घालक थे
निष्पक्ष, निपट निष्काम, ज्ञान-बल-धारी
थे जन-सेवा-व्रत के अनन्य अधिकारी

आमिष-आहार जघन्य क्रूर कुत्सित था
मादक द्रव्यों का सेवन अति वर्जित था
थे धूर्त भूत, छल-छद्म न तब ग्रामों में
ऋजुता, शुचिता थी लिप्त सभी कामों में

सब थे स्वतन्त्र निज धर्म्म-कर्म्म-पालन में
था द्वेष-दम्भ का लेश न जन-जीवन में
समुचित उन्नति नैतिक विकास करते थे
नित सुयश-कोष धरणी-तल पर धरते थे

मानव का धर्म्म कहाता था मानवता
मन, वचन, कर्म्म तीनों में शुचिता-समता
शिव संकल्पों से युक्त सभी के मन थे
थे विमल विचार और निर्मल जीवन थे

पोथों का थोथा ज्ञान न मानवता थी
मानवता का निर्माण पुण्य-प्रभुता थी
जब ज्ञान आचरण में परिणत होता था
तब व्यक्ति सदाचारी, शिक्षित होता था

सद्भाव सत्य युग में सबको भाता था
कोई न किसी पर दुख-संकट ढाता था
सब शान्त, सुखी, सम्पन्न, धर्म्मधारी थे
सच्चे समाज-सेवी, पर-उपकारी थे

सुखियों से मैत्री दुखियों पर करुणा थी
पुण्यों से प्रेम; पाप से घोर घृणा थी
कर्त्तव्य कर्म्म में रत थे सब नर-नारी
कर्मठ, विद्वान्, विनम्र, सत्य आचारी

था निज समाज के लिये व्यक्ति उपयोगी
सच्चा, सेवक, कर्म्मिष्ठ, कुशल, उद्योगी
शुभ सदाचार ही ध्येय बना जीवन का
सर्वदा शुद्ध संकल्प रहा शुचि मन का

जन जनता के हित में निमग्न रहता था
निज स्वार्थ-साधना में न मग्न रहता था
उन्नत समाज हो यही भाव जाग्रत थे
सब एक-दूसरे के हित में अनुरत थे

तब सार्वजनिक सेवा-व्रत अति पावन था
सेवा निमित्त अर्पित सब तन, मन, धन था
जो दम्भी सेवा-कार्य न कर पाते थे
वे त्याज्य, घृणित, दूषित समझे जाते थे

सुख, दुख, दुर्भिक्ष, शत्रु-संकट होने पर
न्यायालय, मरघट, या सब खो देने पर
जो व्यक्ति सहायक हो आड़े आता था
वह बन्धु—सखा, सन्मित्र कहा जाता था

पर-पत्नी माता-सम समझी जाती थी
लिप्सा न लालसा पर-धन पर आती थी
तब प्राणिमात्र में आत्म-रूप दरसाते
सब सब के ऊपर स्नेह-सुधा बरसाते

थीं सती-साध्वी जार कहाँ से आते
जब आग नहीं अंगार कहाँ से आते
मादक द्रव्यों का सेवन दुखदाता था
आमिष को कोई भद्र नहीं खाता था

यदि बढ़ई वृक्ष काटने को जाता है
तो वृक्ष उसे भी छाया पहुँचाता है
इस भाँति शत्रु भी जब घर पर आता था
तो स्नेह सहित आतिथ्य किया जाता था

सब जन सब का विश्वास किया करते थे
मन में शंका, सन्देह न भय भरते थे
विश्वासघात पातक समझा जाता था
जो करता था वह नीच नरक पाता था

पर-हित में छिपा व्यक्ति का हित रहता था
सारा समाज दुख-सुख समान सहता था
जब किसी व्यक्ति पर दुख-संकट आता था
तब सब समाज सक्रिय हित दिखलाता था

विद्या, तप, दान, ज्ञान, गुण, शील न भावे
यन धर्म्महीन जिसने कुकर्म्म अपनाये
वह अहह अधम आदर न कहीं पाता था
भू-भार और नर-पशु समझा जाता था

विद्या-विलास में ही रत रहने वाले
थे शील स्वभाव सत्य पथ गहने वाले
वे निरभिमान पर-दोषों को हरते थे
सब जीवों का कल्याण किया करते थे

जब कोई निज उद्देश्य पूर्ण करता था
या साहस से संकट-सागर तरता था
या दुर्गुण-दानव पर विजयी होता था
वह सफल मनोरथ सुख-निद्रा सोता था

तब प्राणिमात्र पर दया धर्म्म माना था
नीरोग स्वस्थ तन-मन ही सुख जाना था
था कपट रहित व्यवहार प्रेम-परिपालन
करता था ज्ञान हिताहित का संचालन

निश्चित को छोड़ अनिश्चित को ललचाना
था कार्य मूर्खतापूर्ण सतृष्ण कहाना
पौरुष-प्रयत्न से जो कुछ मिल जाता था
उसमें ही सुख-सन्तोष व्यक्ति पाता था

निद्रा, तन्द्रा, भय, क्रोध, प्रमाद, शिथिलता
कर्त्तव्य-कर्म्मपालन में दीर्घ-सूत्रता
इन दोषों से थे मुक्त सभी नर-नारी
सुख-सम्पति से सम्पन्न धर्म्म ध्रुवधारी

जीवन में ऋजुता-शुचिता उमगाते थे
दुख में सब को सुख-सुविधा पहुँचाते थे
धरणी पर आनन्दामृत वरसाते थे
सद्भाव-स्नेह संयुक्त गीत गाते थे

धार्मिक, सामाजिक, वैयक्तिक जीवन में
सब थे स्वतन्त्र, संकोच न था कुछ मन में
पर यह स्वतन्त्रता सदा सत्य-शोधक थी
सब भाँति स्नेह-शुचिता की उद्‌बोधक थी

त्यागा न कभी उद्देश विघ्न या भय से
मद, लोभ, मोह, चिन्ता, जीवन-संशय से
सुख-दुख सम्पत्ति-विपत्ति, भोग अस्थिर थे
था धर्म्म नित्य, भौतिक व्यवहार अचिर थे

जिसका दोषों से भरा हुआ जीवन था
जिसके कलुषित थे कर्म-पापमय मन था
वह जन-सेवा का दम्भ न दिखलाता था
'नेता', 'अगुआ', 'सेवक' न कहा जाता था

जीवन को ब्रह्मचर्य ऊँचा करता था
तन, मन में शक्ति-भक्ति-साहस भरता था
आत्मा में अमर ज्योति जगमग होती थी
जो जन-मन का अज्ञान-तिमिर खोती थी

भौतिकता का भ्रम-भूत पड़ा सोता था
नैतिकता का सत्कार सदा होता था
अध्यात्मवाद अनुरक्त सभी नर-नारी
थे सत्य-धर्म्म-संयुक्त ब्रह्मव्रतधारी

भौतिक उन्नतियाँ क्षणिक और अस्थिर हैं
दैहिक सुख-साधन, भू, धन, धाम अचिर हैं
आत्मिक आनन्द विसार देह सुख पाना
था जीवन को कलुषित-अपवित्र बनाना

मन, बुद्धि, शरीर स्वस्थ सुन्दर होते थे
सन्मार्ग सुझा कर भ्रान्ति-भाव खोते थे
जीवन में उज्ज्वल ज्योति जगमगाते थे
शिव, सत्य और सुन्दर गुण उमगाते थे

आत्मा शरीर का भेद जान पाया था
दोनों का तत्त्व विश्व को समझाया था
माना था आत्म-तत्त्व, अक्षर-अविनश्वर
समझा शरीर भौतिक, अस्थिर, क्षर, नश्वर

समता का प्रबल प्रवाह बहा करता था
वीरत्व सदा हीनत्व भाव हरता था
अभिशाप, पाप, छल, छूत-भूत की छाया
छूती न किसी को, निर्मल थी मन-माया

निज दोषों का चिन्तन कर उन्हें मिटाना
कर स्वाध्याय-सत्संग सुगुण अपनाना
ये भाव नागरिकता के उन्नायक थे
मानव को मंगलमूल, शक्ति-दायक थे

तब आत्म-प्रशंसा दोष गिना जाता था
सद्भाव, ज्ञान, गुण ही आदर पाता था
क्या कस्तूरी निज गुण-गरिमा गाती है
सुखदा सुगन्ध से कण-कण भर जाती है

सब लोग स्वयम् अपनी सेवा करते थे
बन स्वावलम्ब साकार कष्ट हरते थे
था साम्य भाव का सरल, सौम्य शुचि जीवन
गुरु-चरणों में थे, सब के तन, मन अर्पण

आपत्ति काल में हिल-मिल हाथ बटाते
सब लोग परस्पर प्रेम-भाव प्रकटाते
जो देख पराया संकट, आँख चुराता
वह नीच दण्ड पाता : धिक्कारा जाता

जो कायर निश-दिन मन-मोदक खाते थे
जो पोच न उद्यम-श्रम कुछ कर पाते थे
वे विजयी सफलीभूत नहीं होते थे
संशय-सागर में सड़ खाते गोते थे

जिसने संकट-समुद्र को पार किया था
प्रतिकूल परिस्थिति पर अधिकार किया था
उसके मग में जो विकट विघ्न आते थे
साहस से चूर-चूर वे हो जाते थे

जिनमें भौतिक आसक्ति नहीं रहती थी
जिनमें स्वधर्म्म-धारा सदैव वहती थी
वे वीर मृत्यु का शुभ स्वागत करते थे
कर्त्तव्य-मार्ग में कभी नहीं डरते थे

कर क्रोध विवेकी भ्रष्ट नहीं होते थे
अज्ञान-अन्ध हो, नष्ट नहीं होते थे
अवसर पर क्रोध विवेक सहित आता था
वह तेज-शौर्य उत्पादक वन जाता था

भय-संकट, खतरे से न कभी घबराते
जो विपदा पड़ती हँस-हँस कर सह जाते
था अटल आत्म-विश्वास हृदय में-मन मे
आदर्श भरा रहता था जन-जीवन में

जब जीवन में दुःसह संकट आते थे
तब व्यक्ति कसौटी पर परखे जाते थे
जो अग्नि-परीक्षा मे भी मुसकाता था
वह धीर-वीर, गम्भीर कहा जाता था

इन्द्रियाँ न मन पर क़ाबू कर पाती थीं
निग्रह द्वारा विषयों से हट जाती थीं
शम-दम पर सब का ध्यान सदा रहता था
कोई न विषय-वारिधि में तब बहता था

जो व्यक्ति मित्रता कर अपनाया जाता
वह सदा स्नेह-सद्भाव परस्पर पाता
तब सख्य-भाव सुखमूल—शूल हरता था
सौजन्य-स्वर्ण में शुचि सुगन्ध भरता था

सब जन विवेक-सम्पन्न कर्म्म करते थे
दुर्नीति, दम्भ, दुष्कर्मों से डरते थे
कुटिला कुनीति की ओर नहीं जाते थे
वे सत्य, धर्म्म, सत-पथ ही अपनाते थे

समुचित साधन अपनाकर वे बढ़ते थे
उद्योगी बन उन्नति-गिरि पर चढ़ते थे
तब सब को शुभ कर्म्मों की लगन लगी थी
जन-मन में सद्-जीवन की ज्योति जगी थी

जिससे समाज गौरव-गिरि पर चढ़ता है
कर्त्तव्य कर्म्म-पथ पर सदैव बढ़ता है
वह सेवा नित निष्काम हुआ करती थी
दुखियों के संकट, कष्ट, क्लेश हरती थी

छलयुक्त, स्वार्थ-सम्पन्न न तब जीवन थे
तृष्णा-ममता से मुक्त मानवी मन थे
निष्काम भाव से कर्म्म किये जाते थे
कलुषित-कुत्सित व्यापार न हो पाते थे

आदर्शवाद का कठिन मार्ग गहते थे
आपत्ति-विपत्ति, शोक-संकट सहते थे
सिद्धान्त और प्रण-पालन में नित रत थे
कर्त्तव्य-कर्म्म करने में सब सहमत थे

वे 'भाग्य', 'भोग' के गीत नहीं गाते थे
निज पौरुष से सब कुछ कर दिखलाते थे
निर्बल या साहसहीन न होते थे वे
बन कर्म्महीन विधि को न बिगोते थे वे

जिससे समाज या नगर कष्ट पाता था
वह काम भूल कर भी न किया जाता था
जनता सन्तुष्ट, सुखी, निश्छल, निर्भय थी
आदर्श पारिवारिक जीवन की जय थी

लेना-देना जीवन का लक्ष्य अटल था
अधिकार और कर्त्तव्य इसी का फल था
लेना अधिकार और देना 'करतब' था
लेने-देने में भेद-भाव तब कब था

अधिकार समझ जो जन जो कुछ लेता था
कर्त्तव्य-रूप में वापस कर देता था
इस लेन-देन की नित सरिता वहती थी
जनता अभाव-अभियोग नहीं सहती थी

गुण-दोष-विवेचन कर, गुण अपनाते थे
दोषों को मन में भी न कभी लाते थे
गुणियों को आदर-मान दिया जाता था
वंचकता का अपमान किया जाता था

थे कर्म्मवीर बातें न बनाते थे तब
जो करना था, वह कर दिखलाते थे तब
गम्भीर भाव में उथलापन न समाता
थे अति उदार, क्षुद्रत्व कहाँ से आता

व्यवहार न जो अपने निमित्त भाता था
वह कभी दूसरों से न किया जाता था
इससे समाज में शान्ति सदा रहती थी
निर्भ्रान्त भाव से प्रेम-धार वहती थी

कर्त्तव्य-मार्ग में निर्भय हो डटते थे
बाधा-विघ्नों से नेक नहीं हटते थे
था प्राण-विसर्जन सत्य-प्रेम वेदी पर
सब न्याय-निष्ठ थे, स्वर्ग बना था घर-घर

यदि भ्रम-वश भूल किसी से बन पड़ती थी
हठ करते थे न कभी अड़ ही अड़ती थी
सब न्याय-निष्ठ हो परिशोधन करते थे
मिल मित्र-भाव से आलोचन करते थे

अस्पृश्य भाव का क्रूर कलङ्क नहीं था
मानवता का तब दूषित अङ्क नहीं था
सब लोग स्नेह-समता ने अपनाये थे
वसुधा पर बृहत् कुटुम्ब-रूप छाये थे

तब आत्मघात से बढ़ कर पाप नहीं था
इससे निकृष्ट कोई सन्ताप नहीं था
जो जीवन में संघर्ष न कर पाते थे
वे कायर, क्रूर, आलसी कहलाते थे

निष्क्रिय वन व्यर्थ विवाद न करते थे तव
मिथ्या भ्रम या भय-भाव न भरते थे तव
अवकाश-काल में मन-रंजन होता था
दिन-भर के श्रम का दुख-भंजन होता था

सव जीवन-सुविधाएं समान पाते थे
सुख से रहते-सहते, पीते-खाते थे
पर-हित में रत थे, सव सुवोध नर-नारी
निष्काम कर्म्म-पद्धति थी उनको प्यारी

दुर्भाव परस्पर उन्नति में वाधक था
सहयोग समाज-व्यक्ति का सुख-साधक था
सन्तुलित भाव ही उन्नति का कारण था
सव का 'निर्वाध-नीति' ही निर्द्धारण था

तव भव्य भावना का विस्तार हुआ था
सव हृदयों पर सत् का अधिकार हुआ था
परिवार-रूप सारा समाज-जीवन था
शुभ संकल्पों से युक्त सभी का मन था

'गणतन्त्र'

तुम त्याग-तपस्या से जन्मे
बलिदानो से बल लाये हो
संघर्षों के पलने में पल
गणतन्त्र, लोक-हित आये हो

सम्राटों की सत्ता काँपी
भूपों के सिंहासन डोले
गणतन्त्र, तुम्हारे आते ही
जन-जन जागे : कण-कण बोले

स्वागत, स्वागत हे लोकमान्य,
तुम में भारत की भक्ति भरी
इन चार अक्षरों के भीतर
कोटानिकोटि की शक्ति भरी

गणतन्त्र, तुम्हारे स्वागत में
प्राणों के पुष्प बिछाये हैं
आज़ादी के परवानों ने
हँस-हँस कर शीष चढ़ाये हैं

'बापू' का वैभव तुम में है
तुम सत्य-अहिंसा-साधक हो
जन-जन तुम में; तुम जन-जन में
जन-जनता के आराधक हो

आओ, आओ, निज जननी को
जुग-जुग, गणतन्त्र, निहाल करो
फिर गौरवशीला माता का
भूतल पर उन्नत भाल करो

डग-डग पर डगमग करने को
पग-पग पर पड़े प्रलोभन हैं
पथ-भ्रष्ट कहीं मत हो जाना
मोहक रमणी, धरणी, धन हैं

हो शक्ति-भक्ति का ह्रास नहीं
फँस-फँस कर व्यर्थ विवादों मे
गौरव-गरिमा न गिराना तुम
आजादी के उन्मादों में

विघ्नों को नष्ट-भ्रष्ट करके
निर्भय आगे बढ़ते जाओ
सद्भाव-साधना साथ लिये
गौरव-गिरि पर चढ़ते जाओ

तुम दीन–दरिद्रों–दुखियों के
कष्टों पर प्रबल प्रहार करो
संकट से तारो श्रमिकों को
कृषकों का पुनरुद्धार करो

निर्बल से निर्बल वाणी पर
तुम कान-ध्यान देते रहना
मूकों, बधिरों, असहायों की
फिर-फिर कर सुधि लेते रहना

अन्याय-असुर विध्वंस हेतु
अति तीव्र, तप्त, विष-बाण बनो
नय-नीति, न्याय-निधि-रक्षाहित
तुम त्राण, प्राण, कल्याण बनो

गण-गण में गुण-गण विकसित हों
कण-कण से कायरता भागे
मन-मन में भद्र भाव उमगें
जन-जन में नैतिकता जागे

जन-जन जनता का अंग बने
जनता जन-जन की पोषक हो
जन-जनता में कोई न कहीं
जन या जनता का शोषक हो

सब को समान सुख-साधन हों
सब ही सब भाँति विकास करें
अपने-अपने गुण-गौरव का
जनता-हित-हेतु प्रकाश करें

जन-जन में शुचिता-समता हो
विषयुक्त विषमता भाव न हो
गणतन्त्र, राष्ट्र की ऋजुता पर
कटुता का कुटिल प्रभाव न हो

नित प्रेम-प्रवाह प्रवाहित हो
सद्भाव सदा 'गुरुमन्त्र' बने
शुभ संयत शासन-चक्र चले
जनता हित-साधक 'तन्त्र' बनें

समता, स्वतन्त्रता, बन्धु-भाव—
से गूँज उठे पृथिवी सारी
यह लोक 'सत्य', 'शिव', 'सुन्दर' हो
हो मानवता मंगलकारी

सबको सुविधा धन-साधन की
ममता-मय व्यक्ति-विधान न हो
निजता-परता, भ्रम-भेद मिटे
जन-जीवन स्वार्थ-प्रधान न हो

संकीर्ण भावनाएं तज कर
निज धर्म्म-कर्म्म में मग्न रहें
सद्भाव-प्रकाशन में स्वतन्त्र
हित-साधन में संलग्न रहें

वह शिक्षा-सुधा मिले जिससे—
तन स्वच्छ, स्वस्थ, सम्पुष्ट बनें
मन और आत्मा उज्ज्वल हों
सब के जीवन उत्कृष्ट बनें

धन-सन्तति से सम्पन्न रहें
घृत, दूध, दही, मधु-धार बहें
कृषि-कर्म्म, खानि, वन-वैभव से
भरपूर सदा भण्डार रहें

प्रतिभाशाली पण्डित प्रवीण
कवि-कोविद ज्ञान प्रदान करें
विज्ञान बने वरदान सदा
साहित्य-सुधा-रस-पान करे

वाणिज्य, शिल्प, उद्योग-द्वार
सबको समान उन्मुक्त रहें
विद्वान्, विचारक, कलाकार
गृह-चिन्ताओं से मुक्त रहें

गणतन्त्र, शुष्क जन-जीवन में
ऋजुता, शुचिता सरसाओ तुम
धन-धान्य, मान्य, दो दान हमें
सुख-शान्ति सुधा बरसाओ तुम

वाणी, लेखनी स्वतन्त्र रहें
पर-मत सहिष्णु हों नर-नारी
पावें सुयोग्य जन समुचित पद
गुण, कर्म्म-कला के अधिकारी

जनता प्रतिनिधि-निर्वाचन में
ज्ञानी, गुणियों का मान करे
सच्चे सुयोग्य जन-सेवक को
श्रद्धा से निज मत दान करे

रण रोप-रोप नर-मेध न हों
सुख, शान्ति, प्रेम-मय प्राणी हों
वसुधा कुटुम्ब-सम सरसाए
मानव-गति-मति कल्याणी हो

सब राज्य—राष्ट्र सस्नेह रहें
मिल-जुल कर उलझन सुलझाएँ
पद-प्रभुता की उन्माद-अग्नि
क्यों मानवता पर बरसाएँ

माता वसुन्धरा की वसुधा
जन-जीवों को सुखदायक हो
विज्ञान-ज्ञान अध्यात्मवाद
सबको सब भाँति सहायक हो

जन-सेवा नित निष्काम करें
सहयोग-नीति अपनाएं सब
सतयुग-सा युग फिर आ जाए
घर-घर को स्वर्ग बनाएं सब

राष्ट्र-ध्वज

जुग - जुग लहरे - फहरे प्यारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा

त्रिगुण, तिरंगा व्योम - विहारी
शक्ति, शान्ति, आशा ध्रुवधारी
जन - मन - मोहन, मंगलकारी
दिव्य ज्योतिका स्रोत सितारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

जल, थल, नभ, भव पर फहराए
तार - तार वैभव बरसाए
लहर-लहर सन्देश सुनाए—
'मिलती विजय त्याग-तप द्वारा'
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

सत्य - अहिंसा का व्रत-बन्धन
श्रमिक, किसान, निर्धनों का धन
अमर शहीदों का चिर-चिन्तन
मानवता का सबल सहारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

जन-जन-जीवन, जन-जन-वन्दन
सुख-समृद्धि, शुचिता-अभिनन्दन
पुण्य - प्रतीक, कुनीति - निकन्दन

त्राण, प्राण, कल्याण हमारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

गतिमय चक्र ज्वलित जीवन है
जड़ता मृत्यु : मोह बन्धन है
पर-हित कर्म्म श्रेय - साधन है

साहस, बल, विवेक विस्तारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

शस्य-श्यामला मान्य मही है
गुण - गौरव - सम्पन्न रही है
पूजित धन्य, अनन्य यही है

जननी - जन्मभूमि हगनारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

स्वतन्त्रता की ज्योति जगी है
स्वर्ण - प्रभात - प्रभा उमगी है
सेवा - समता प्रेम - पगी है

गौरव - सौरभ सुयश प्रसारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

संघर्षों की क्रूर कथाएँ
जीवन की विषमयी व्यथाएँ
धीर - वीर, गम्भीर बनाएँ
मेटें दुखियों का दुख सारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

जय जनतन्त्र, सुमन्त्र - प्रदाता
जय अजेय, जय राष्ट्र-विधाता
जय सुनीति-नायक - निर्माता
सब कुछ वारा, राष्ट्र उबारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

जीकर- मरकर मान बढ़ाएँ
शान रहे, जी - जान लड़ाएँ
गौरव - गिरि पर चढ़ें - चढ़ाएँ
सब में निर्भय भाव प्रचारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।

भक्ति - भाव से सीस - नवाएँ
रक्षा-हित हम बलि-बलि जाएँ
कोटि - कोटि कण्ठों से गाएँ
अजर-अमर, अक्षय ध्रुव-धारा
झण्डा जीवन - प्राण हमारा।